कल्पमेधा

दो ऐसी चीजें हैं, जिनके बारे में मनुष्य को कभी गुस्सा नहीं होना चाहिए। पहली, वह किन लोगों की मदद कर सकता है और दूसरी, वह किन लोगों की मदद नहीं कर सकता है।

- प्लेटो

अनसुलझे सवाल

गुजरात के अहमदाबाद में बीते जून माह में हुए विमान हादसे की प्रारंभिक जांच में एक चौंकाने वाला खुलासा हुआ है। रपट में कहा गया है कि दुर्घटना से ठीक पहले विमान के दोनों इंजन में ईंधन पहुंचाने वाले स्विच बंद हो गए थे, जिससे पायलटों में भ्रम की स्थिति पैदा हो गई। भ्रम इस बात का कि स्विच किसने बंद किए। यह तकनीकी खराबी के कारण हुआ या किसी की गलती से, रपट में इसका कोई उल्लेख नहीं है। यानी हादसे के एक कारण का तो पता चल गया, लेकिन इस कारण के पीछे असल वजह क्या थी, यह सवाल अब भी अनुत्तरित है। एअर इंडिया के बोइंग 787 ड्रीमलाइनर विमान में सवार 242 लोगों में से एक को छोड़कर बाकी सभी की इस हादसे में मौत हो गई थी। इस दुर्घटना के बाद कई सवाल खड़े हुए हैं, जिनका जवाब इसलिए भी तलाशना जरूरी है, ताकि भविष्य में ऐसी किसी बड़ी त्रासदी को रोकने के पुख्ता बंदोबस्त किए जा सकें।

विमान दुर्घटना जांच ब्यूरो (एएआइबी) की रपट के अनुसार, एअर इंडिया के इस विमान के उड़ान भरने के कुछ ही क्षण बाद इसके दोनों ईंधन नियंत्रण स्विच (जिनका उपयोग इंजनों को बंद करने के लिए किया जाता है) अचानक बंद हो गए थे। इसकी पुष्टि घटना के वक्त 'काकपिट वायस रेकार्डिंग' में पायलट और सह-पायलट की आपसी बातचीत से हुई है। जांच रपट में कहा गया है कि बातचीत के दौरान एक पायलट ने दूसरे से पूछा कि ईंधन की आपूर्ति क्यों बंद की गई, तो जवाब मिला कि उन्होंने ऐसा नहीं किया। इससे साफ है कि हादसे से पहले विमान के दोनों इंजन ने काम करना बंद कर दिया था। अब सबसे बड़ा सवाल यह है कि दोनों ईंधन नियंत्रण स्विच एक साथ बंद कैसे हो गए। नियमानुसार उड़ान से पहले विमान की तकनीकी जांच की जाती है और सभी मानकों पर संतोषजनक रपट के बाद ही उड़ान की अनुमति दी जाती है। ऐसे में यह प्रश्न उठना स्वभाविक है कि अगर एअर इंडिया के इस विमान में कोई तकनीकी खराबी थी, तो वह उड़ान से पहले की जांच के दौरान पकड़ में क्यों नहीं आई? हादसे की आगे की जांच में इन आशंकाओं से जुड़े सवालों को भी शामिल करने की जरूरत है।

जांच रपट का दूसरा पहलू यह है कि कहीं अनजाने में पायलट की गलती से ईंधन नियंत्रण स्विच बंद तो नहीं हुए थे! हालांकि, रपट में विमान के पायलटों की गलती की ओर स्पष्ट रूप से कोई संकेत नहीं किया गया है। वहीं, विमानन क्षेत्र के विशेषज्ञों का कहना है कि पायलटों द्वारा ईंधन स्विच को अनजाने में चालू या बंद करने की संभावना बहुत कम होती है, क्योंकि स्विच में एक छोटा 'मैकेनिकल गेट' लगा होता है। रपट में कहा गया है कि दोनों पायलटों ने इंजनों को फिर से चालू करने की कोशिश की, लेकिन एक इंजन ही ठीक हो पाया, जबकि दूसरा गति बढ़ाने के लिए पर्याप्त ऊर्जा उत्पन्न नहीं कर पाया। यानी पायलटों ने उस नाजुक घड़ी में हार नहीं मानी थी और उन्होंने वह हर कोशिश की जो संभव थी। इसके अलावा विमान दुर्घटना जांच ब्यूरो ने इस हादसे के पीछे किसी साजिश की आशंका को भी अभी तक दरकिनार नहीं किया है। वैसे भी जिस तरह से यह पूरा घटनाक्रम सामने आया है, उसमें हर पहलू की गहन जांच होनी चाहिए और हर जरूरी कदम उठाए जाने चाहिए।

हिंसक होते बच्चे

इससे बड़ी विडंबना और क्या हो सकती है कि जिन बच्चों को देश और समाज का भविष्य माना जाता है, आज उनमें से कई इस रूप में सामने आ रहे हैं जिसके समाज पर व्यापक प्रतिगामी प्रभाव पड़ने वाले हैं। मौजूदा समय में बच्चों के बीच पलती-बढ़ती हिंसा के कई बार चिंताजनक रूप में अभिव्यक्त होने की घटनाओं को इक्का-दुक्का बता कर नजरअंदाज कर दिया जाता है, लेकिन यह ध्यान रखने की जरूरत है कि नकारात्मक प्रवृत्तियां कोमल मन-मस्तिष्क वाले बच्चों के बीच तेजी से अपनी जगह बनाती हैं और उसका व्यापक असर समाज पर पड़ता है। सवाल है कि पिछले कुछ वर्षों में ऐसा क्या हुआ है कि जिन बच्चों की उम्र पढ़ने और खेलने की होती है, घर-परिवार से लेकर स्कूल तक के अग्रजों, अभिभावकों, बुजुर्गों, शिक्षकों की सलाह से एक बेहतर भविष्य की ओर कदम बढ़ाने की होती है, वे किसी मामूली बात पर बेकाबू हो रहे हैं। कुछ बच्चे साधारण बातों पर आक्रामक होकर प्रतिक्रिया देने लगे हैं या उनमें से कई अपनी बेहतरी के लिए खुद में सुधार करने की सलाह देने वाले शिक्षक की हत्या करने से भी नहीं हिचकते हैं।

गौरतलब है कि हरियाणा के हिसार में पिछले हफ्ते एक स्कूल के प्रधानाचार्य की वहीं पढ़ने वाले दो बच्चों ने चाकू मार कर हत्या कर दी। खबरों के मुताबिक, इसका कारण सिर्फ यह था कि प्रधानाचार्य ने उन बच्चों को अपने लंबे बाल कटवाने और स्कूल में अनुशासन का पालन करने को कहा था। यह एक सामान्य बात रही है कि स्कूलों के अध्यापक न केवल कक्षाओं में पढ़ाते हैं, बल्कि बच्चों के व्यक्तित्व को बेहतर बनाने के लिए जरूरी सलाह भी देते रहे हैं। इसका समाज पर बेहद सकारात्मक असर भी साफ दिखता था। मगर आज इन्हीं बातों पर कुछ छात्र प्रतिक्रिया में आपराधिक रास्ता तक अख्तियार कर ले रहे हैं। क्या यह स्मार्टफोन या अन्य संसाधनों के जरिए आभासी संसार में डूबे रहने की बढ़ती अवधि और अन्य कुछ वजहों से सोचने-समझने की प्रक्रिया के शिथिल होने का नतीजा है कि बच्चों के भीतर हिंसक प्रवृत्तियों का विकास हो रहा है और वे अपने हित को लेकर विवेक के उपयोग को लेकर उदासीन हो रहे हैं? जाहिर है, यह समय रहते समूचे समाज के लिए चेतने और जरूरी पहल करने का वक्त है।

संघर्ष के चक्र में शांति की चुनौतियां

अर्थशास्त्र और शांति संस्थान के वैश्विक शांति सूचकांक 2025 में 0.36 फीसद की गिरावट दर्शाती है कि 163 देशों में से अधिकांश में अशांति है और वे संघर्ष तथा अस्थिरता की बढ़ती तपिश का सामना कर रहे हैं, जबकि कुछ ही राष्ट्र स्थिरता की राह पर खड़े दिखाई दे रहे हैं।

देवेंद्रराज सुथार

आधुनिक वैश्विक परिदृश्य में युद्धोन्माद, राजनीतिक अस्थिरता, आर्थिक विषमताएं और सांस्कृतिक ध्रुवीकरण ने मानवता की नींव को गहरे संकट में डाल दिया है। अर्थशास्त्र और शांति संस्थान की ओर से प्रकाशित वैश्विक शांति सूचकांक 2025 में दर्ज 0.36 फीसद की कमी को द्वितीय विश्व युद्ध के बाद की सबसे गंभीर गिरावट माना जा रहा है। यह मानवीय चेतना के क्षरण और अंतरराष्ट्रीय विश्वास के टूटने का प्रतिबिंब है। यह गिरावट दर्शाती है कि 163 देशों में से अधिकांश संघर्ष और अस्थिरता की बढ़ती तपिश का सामना कर रहे हैं, जबकि कुछ ही राष्ट्र स्थिरता की राह पर खड़े दिखाई दे रहे हैं।

वैश्विक शांति में यह गिरावट केवल समकालीन सैन्य टकराव या सीमा-संघर्ष तक ही सीमित नहीं, बल्कि यह बहुआयामी संरचना का विचलन है, जिसमें शासन की गुणवत्ता, लोकतांत्रिक प्रक्रियाएं, मानवाधिकारों की सुरक्षा, आर्थिक अवसरों का न्यायसंगत वितरण और सूचना पारदर्शिता शामिल हैं। जब तक ये सभी तत्त्व संतुलित तरीके से मौजूद नहीं होंगे, तब तक शांति केवल एक आकांक्षा ही बनी रहेगी। पिछले सत्रह वर्षों में औसतन 5.4 फीसद की गिरावट ने यह स्पष्ट कर दिया है कि रणनीतिक समझौते और सैन्य क्षमता निर्माण जैसे पारंपरिक उपाय पर्याप्त नहीं हैं, बल्कि एक व्यापक बदलाव की आवश्यकता है, जो विश्वास निर्माण, पारस्परिक सम्मान और सहयोग के सिद्धांतों पर आधारित हो।

भारत इस सूचकांक में 115वें स्थान पर है, जिसे इस बार 2.314 अंक मिले हैं। देश में पिछले वर्ष की तुलना में 0.58 फीसद का सुधार दर्शाता है कि आंतरिक सुरक्षा उपायों, सीमा प्रबंधन और राजनीतिक स्थिरता में किए गए प्रयासों का आरंभिक प्रभाव दिखने लगा है। हालांकि, यह सुधार तब तक पर्याप्त नहीं माना जा सकता, जब तक सामाजिक असमानता, जातीय व धार्मिक विभाजन और सूचना संकट जैसी चुनौतियों का मूल रूप से समाधान नहीं किया जाता। विविधता में एकता की हमारी परंपरा तभी सफल हो सकती है, जब हर समुदाय को समान अधिकार, सांस्कृतिक स्वायत्तता दी जाए और राष्ट्रीय एकता को व्यक्तिगत और सामूहिक सुरक्षा का पर्याय माना जाए।

वर्तमान युद्ध उन्माद की जड़ भय और असमानता की मनोवैज्ञानिक संरचना में निहित है। जब कोई व्यक्ति या समुदाय आत्मरक्षा की जरूरत महसूस करता है, तो वह बाहरी खतरों के प्रति बेहद संवेदनशील हो जाता है। इससे न केवल हथियारों की होड़ बढ़ती है, बल्कि आंतरिक रूप से विभाजन और कटुता की दहलीज भी पार हो जाती है। ऐसी स्थिति में नीति-निर्माण केवल तकनीकी या सैन्य विशेषज्ञता के आधार पर ही नहीं, बल्कि सामाजिक मनोविज्ञान और सामुदायिक संवाद के दृष्टिकोण से भी जरूरी है। जब तक भय की भावना का समाधान नहीं किया जाता तथा सहयोग और आपसी समझ को प्राथमिकता नहीं दी जाती, तब तक शांति की टिकाऊ संरचना का निर्माण संभव नहीं होगा। वैश्विक स्तर पर आय, शिक्षा, स्वास्थ्य एवं अवसरों का असंतुलित वितरण समानता के सिद्धांत का उल्लंघन करता है और समाज के हाशिये पर स्थित वर्गों में असंतोष के बीज बोता है। यह असंतोष धीरे-धीरे विद्रोह तथा हिंसात्मक आंदोलनों का रूप धारण करता है, जो सामूहिक स्थिरता को कमजोर करते हैं।

भारत के संदर्भ में ग्रामीण एवं शहरी असमानताओं के बीच का अंतर, लिंग आधारित भेदभाव एवं सीमांत समुदायों की गरीबी जैसी चुनौतियां प्रभावी सामाजिक सुरक्षा योजनाओं एवं संवैधानिक अधिकारों के मानकीकरण के माध्यम से ही दूर की जा सकती हैं। सूचना युग में शांति के सामने सूचना संकट

> **भारत शांति सूचकांक 2025 में 115वें स्थान पर है, जिसे 2.314 अंक मिले हैं। पिछले वर्ष की तुलना में 0.58 फीसद का सुधार दर्शाता है कि आंतरिक सुरक्षा उपायों, सीमा प्रबंधन और राजनीतिक स्थिरता में किए गए प्रयासों का आरंभिक प्रभाव दिखने लगा है। हालांकि, यह सुधार तब तक पर्याप्त नहीं माना जा सकता, जब तक सामाजिक असमानता, जातीय व धार्मिक विभाजन और सूचना संकट जैसी चुनौतियों का मूल रूप से समाधान नहीं किया जाता। विविधता में एकता की हमारी परंपरा तभी सफल हो सकती है, जब हर समुदाय को समान अधिकार और सांस्कृतिक स्वायत्तता दी जाए।**

एक नया खतरा बन कर उभरा है। जहां मीडिया स्वतंत्रता में 13.4 फीसद की गिरावट हुई है, वहीं सूचना की गुणवत्ता में 6.9 फीसद की कमी ने सामाजिक विश्वास को कमजोर किया है। असत्यापित सूचनाएं, सोशल मीडिया पर फैलने वाली अफवाहें तथा राजनीति से प्रेरित दुष्प्रचार आज के समय में नागरिकों के बीच अविश्वास की दीवारें खड़ी कर रहे हैं। जब तक नागरिकों की पहुंच सही एवं पर्याप्त जानकारी तक नहीं होगी, तब तक लोकतांत्रिक प्रक्रियाओं तथा सामाजिक समरसता दोनों पर प्रतिकूल प्रभाव बना रहेगा। वैश्विक सैन्य व्यय में निरंतर वृद्धि ने शांति के विरोधाभास को और तीव्र कर दिया है। वर्ष 2024 में 2.7 ट्रिलियन अमेरिकी डालर तक पहुंच चुका सैन्य खर्च यह दर्शाता है कि राष्ट्र अपनी समस्याओं का समाधान शक्ति प्रदर्शन से करते रहे हैं। जबकि वास्तविक सुरक्षा तब सुनिश्चित होती है, जब राष्ट्र पारस्परिक विश्वास-निर्माण, क्षेत्रीय सहयोग एवं मानवीय समाधानों को प्राथमिकता देते हैं।

परमाणु-सशस्त्र एवं प्रौद्योगिकी-आधारित युद्ध प्रणालियों के विस्तार ने अप्रत्याशित जोखिमों को जन्म दिया है, जिसे केवल कूटनीतिक संधियों एवं हथियार नियंत्रण समझौते ही नहीं, बल्कि दीर्घकालिक शांति निर्माण परियोजनाओं से ही नियंत्रित किया जा सकता है। गैर-सरकारी संस्थाओं एवं युवा स्वयंसेवकों द्वारा संचालित शांति कार्यशालाएं, स्थानीय परियोजनाएं एवं सामाजिक उद्यम सामूहिक चेतना के उत्थान में अहम भूमिका निभा सकते हैं। शांति की अवधारणा यह बताती है कि शांति केवल हिंसा की अनुपस्थिति नहीं, बल्कि उन संस्थागत एवं सामाजिक तंत्रों की उपस्थिति है, जो समाज को स्थिर एवं समृद्ध बनाए रखते हैं। इसमें भ्रष्टाचार नियंत्रण, न्यायिक पारदर्शिता, संसाधन वितरण में न्याय तथा मानवाधिकारों का सम्मान शामिल है। आइसलैंड, आयरलैंड एवं न्यूजीलैंड जैसे राष्ट्रों ने अपने प्रशासनिक और सामाजिक माडल में इन सिद्धांतों को संस्थागत रूप दिया है, जिसके परिणामस्वरूप उनके शांति सूचकांक उच्चतम स्तर पर हैं। भारत की सांस्कृतिक विरासत में 'अहिंसा', 'सर्वधर्म समभाव' एवं 'वसुधैव कुटुंबकम' जैसे मूल्य विद्यमान हैं, जिन्हें आधुनिक प्रशासनिक नीतियों एवं सामुदायिक सम्मेलनों के माध्यम से मूर्त रूप में परिवर्तित किया जा सकता है।

भारत को अपनी विदेश नीति में 'साझा सुरक्षा' एवं 'साझा समृद्धि' के सम्मिलित दृष्टिकोण को बढ़ावा देना चाहिए, जिससे पारस्परिक सम्मान और विश्वास का आधार तैयार हो। व्यापारिक साझेदारियां, सांस्कृतिक आदान-प्रदान एवं शैक्षणिक अनुसंधान सहयोग भी शांति प्रक्रिया में योगदान दे सकते हैं। युद्ध की भाषा को संवाद से प्रतिस्थापित करना, अविश्वास की दीवारों को पारस्परिक सम्मान से ध्वस्त करना तथा असमानता की खाई को न्यायसंगत नीतियों एवं सार्वभौमिक अवसरों से पाटना समय की जरूरत है। वैश्विक समुदाय यदि वर्तमान परिदृश्य में चुनौतियों से अनभिज्ञ बना रहेगा, तो केवल हथियार प्रणालियां और सैन्य व्यय बढ़ाने से स्थायी शांति स्थापित नहीं होगी। इसके विपरीत हमें न्याय, समानता, पारदर्शिता एवं करुणा जैसे मूल्यों को व्यावहारिक रूप में संस्थागत करना होगा। प्रत्येक राष्ट्र, समुदाय एवं हर नागरिक का दायित्व है कि वह इन सिद्धांतों के अनुरूप कार्य कर समाज के आधार को मजबूत करे। भारत अपनी ऐतिहासिक परंपराओं और आधुनिक महत्त्वाकांक्षाओं को संतुलित करते हुए न केवल क्षेत्रीय, बल्कि वैश्विक शांति प्रयासों में एक भी प्रेरणास्रोत बन सकता है। हमें सामूहिक प्रयास जारी रखते हुए शांति के बहुमुखी आयामों को अपना कर एक स्थायी, न्यायसंगत एवं समृद्ध भविष्य का मार्ग प्रशस्त करना होगा, जहां मानवता का वास्तविक गौरव केवल शक्ति नहीं, बल्कि सहयोग, सहिष्णुता एवं समानता हो।

दुनिया मेरे आगे

भविष्य की खातिर

निधि शर्मा

हम अक्सर इस बात पर खुश होते हैं और प्रकृति को धन्यवाद देते हैं कि हमें धरती पर जन्म लेने का अवसर मिला। लेकिन आज समूची दुनिया में मनुष्य की गतिविधियों से हालात यह होती जा रही है कि शायद धरा को कभी अपनी फिक्र होती होगी और वह सोचती होगी कि आखिर मनुष्य खुद ही अपने जीवन के सूत्रधार के प्रति इस हद तक लापरवाह क्यों है। यह तो वही बात हो गई कि किसी बैंक ने उत्पादक कामों के लिए किसी को कर्ज दिया, लेकिन मनुष्य की अदूरदर्शिता ने उस धन का उपयोग गैर-उत्पादक कार्यों में लगाकर अपनी पुश्तों के भविष्य के सामने अनेक अवरोध खड़े कर दिए।

आज धरती पर प्राकृतिक संसाधनों के अंधाधुंध उपयोग के कारण हम अपनी प्यारी संतानों के लिए घायल और थकी हुई धरती को छोड़ कर जाने की राह पर अग्रसर हैं, बिना यह समझे कि इसका नतीजा क्या सामने आएगा। इस बात से अनभिज्ञ क्यों हैं कि हम आज जो कर रहे हैं कि उसके बाद हमारी संतानों का वही हाल होगा जो कर्ज न चुकाने के कारण कुछ परिवारों में बचे हुए लोगों या अगली पीढ़ियों का अक्सर देखा जाता है। ऐसी खबरें आम हो चुकी हैं, जिनमें समूचे परिवार के लोग आत्महत्या का घातक रास्ता अपना लेते हैं। हालांकि ऐसी स्थिति पैदा होने में परिवार के मासूमों का क्या कसूर होता है, जिन्हें मालूम भी नहीं होता कि उनके पिताजी या दादाजी ने किसी से कर्ज क्यों लिया था और उसे चुकाने के लिए कौन जिम्मेदार था। यही आलम आज दुनिया में विकास के नाम पर छलनी हो रहे परिवारों का है, जो अपने बच्चों को अच्छा भविष्य देने के लिए पर्यावरण का अंधाधुंध दोहन कर रहे हैं। यह भविष्य तो क्या, सबका वर्तमान भी खराब कर रहा है।

> **जब नुकसान की मार हम सब पर पड़ने लगती है तब हम इस बात का अनुमान नहीं लगा पाते कि आगे क्या होगा। क्या हम उस स्थिति की कल्पना कर पाते हैं कि भविष्य में बच्चों को यह पढ़ाने की नौबत आ सकती है कि कहीं एक पेड़ था, एक नदी थी और किसी इलाके में जंगल हुआ करते थे।**

पिछले कुछ समय से इस मौसम में पहाड़ी राज्यों में हो रही भारी बरसात ने मनुष्य के विकास के माडल की कलई खोल कर रख दी है। कई पहाड़ी इलाकों में कुछ समय पहले एक या दो तीन दिन की भारी बारिश ने कितने-कितने सपनों के आशियाने ताश के पत्तों की तरह उड़ा दिए। कहा जा रहा है कि पहाड़ आक्रोशित हैं। उनकी सजावट के उनके समान-जंगल, नदी और नालों पर लोगों का कब्जा हो चुका है। बार-बार बैंक की तरह चेतावनी देने पर भी कोई भी सुधरने को तैयार नहीं है और न ही सुधरने का कोई संकेत दिखता है। जब-जब धरती की गैर-निष्पादित परिसंपत्तियां लगातार बढ़ेंगी, तब-तब प्रकृति अपना धन वापस लेने के लिए उग्र रूप धारण करेगी, क्योंकि निष्ठुर हो चुकी मनुष्य जाति पर अब कोमलता और संयमित नोटिस का कोई असर नहीं होता। वर्ष में बरसात के दो से तीन महीने में ही उसे अपना अधिकार और शक्तियां उपयोग करने का मौका मिलता है। अन्यथा मनुष्य तो प्रकृति पर अपना एकाधिकार जमाए हुए है। दुखद पहलू यह है कि जिस तरह बड़े-बड़े धनपति बैंकों का अरबों रुपए लेकर देश से भाग जाते हैं, उसी तरह अमेरिका जैसे विकसित देश पर्यावरण को सुरक्षित रखने के लिए तैयार किए गए महत्त्वपूर्ण दस्तावेज पेरिस जलवायु समझौते से बार निकल जाते हैं। उसकी देखा-देखी में अन्य छोटे-छोटे कर्ज लेने वाले भी प्रकृति का कर्ज चुकाने में आनाकानी करने लग जाते हैं।

दूसरी ओर, इस कशमकश में संयुक्त राष्ट्र की एजंसी संयुक्त राष्ट्र पर्यावरण कार्यक्रम मूकदर्शक बन कर बस तमाशा देखता है। हालांकि विश्व में तमाशा देखने वालों की कमी नहीं है, क्योंकि वास्तविक मुद्दों पर बोलना कोई नहीं चाहता है। चाहे समुद्र का जलस्तर लोगों के घर और शहर डुबो दे, हमारे भविष्य वायु प्रदूषण से अपना बचपन खो दें, बेशक आक्सीजन खरीदनी पड़े और चाहे बाद में सारी जमा-पूंजी बरसात में ऋण से बनाई गई जायदाद को फिर खड़ा करने में खर्च हो जाए। क्या फर्क पड़ता है? हम बस यहीं सोचते जा रहे हैं धरा मां ही है, जो फिर सब कुछ भूल कर हमें अपना लेगी। लेकिन ये नहीं पता कि संयम का भी एक मूल होता है और जब वह बार-बार छलनी होगा, तो संयमित नहीं रह पाएगा।

जब इसके नुकसान की मार हम पर और सब पर पड़ने लगती है, तब हम इस बात का अनुमान नहीं लगा पाते कि भविष्य क्या होगा। क्या हम उस स्थिति की कल्पना कर पाते हैं कि भविष्य में हमारे सामने अपने बच्चों को यह पढ़ाने की नौबत आ सकती है कि कहीं एक पेड़ था, एक नदी थी और किसी इलाके में जंगल हुआ करते थे। बहुत सारे पंछी सुबह-सुबह अपनी सुरीली आवाज से जग को जगाया करते थे।

हो सकता है कि हम आज फिक्र को दरकिनार कर दें, लेकिन अगर यही हालात रहे तो आने वाली नस्लों को खारे पानी के समुद्र ही मिलेंगे और पीने के पानी के लिए उनकी पचास फीसद से अधिक पूंजी खर्च हो जाएगी। वह पीढ़ी सिर्फ मशीनों से बात करेगी और हवा को साफ करने के मास्क लगाकर घूमती नजर आएगी। अब भी जागने का वक्त है और यह सोचने की जरूरत है कि भविष्य को लेकर ऐसी आशंकाएं सिर्फ एक सपना हों। हमें अभी से सबके साथ मिलकर धरती और प्रकृति का ऋण चुकाने के लिए एकजुट होना होगा, क्योंकि आने वाले समय में हमें बच कर शायद कहीं भागने का भी मौका नहीं मिलेगा।

संवेदनहीनता की ओर

आज डिजिटल युग में सोशल मीडिया समाज के हर वर्ग को गहराई से प्रभावित कर रहा है। फेसबुक, इंस्टाग्राम, वाट्सएप, एक्स और यूट्यूब जैसे मंचों पर हमारी दिनचर्या तथा सोच तेजी से निर्भर होती जा रही है। जहां एक ओर सोशल मीडिया ने सूचना, शिक्षा और संवाद का तेज माध्यम दिया है, वहीं दूसरी ओर हमारी गोपनीयता, मानसिक स्वास्थ्य और पारिवारिक रिश्तों पर नकारात्मक असर डाल रहा है। अब लोग एक-दूसरे के साथ कम और मोबाइल स्क्रीन पर अधिक समय बिताने लगे हैं। बच्चे अब बड़ों के सामने निस्संकोच फोन चलाते रहते हैं। परिवारों में संवाद की जगह अब 'स्टेटस' और 'रील्स' ने ले ली है, जिससे आपसी संबंधों में दूरी के साथ ठंडापन बढ़ रहा है। मानसिक स्वास्थ्य पर इसका सीधा असर देखने को मिल रहा है। लगातार स्क्रीन पर समय बिताना, 'लाइक्स' और प्रशंसकों की घटती संख्या, युवाओं में तनाव और आत्मविश्वास की कमी जैसे लक्षणों को जन्म दे रहे हैं। यदि सोशल मीडिया का उपयोग सीमित और सकारात्मक उद्देश्य से किया जाए, तो यह एक शक्तिशाली साधन बन सकता है। मगर इसका दुरुपयोग समाज को भटकाव और संवेदनहीनता की ओर ले जा रहा है।

- सावित्री शाह, सिंगरौली

पितृसत्ता की परतें

गुरुग्राम की टेनिस खिलाड़ी की हत्या केवल पारिवारिक हिंसा नहीं, बल्कि पितृसत्तात्मक मानसिकता की खोखली अवधारणा की क्रूर परिणति है। राधिका ने अपनी टेनिस अकादमी के माध्यम से आत्मनिर्भरता और महिला सशक्तीकरण की एक मिसाल कायम की थी, लेकिन पिछले दिनों पिता ने गुस्से में आकर उसकी पीठ में तीन गोलियां उतार दीं। पुलिस की जांच ने यह स्पष्ट कर दिया कि यह हत्या सोशल मीडिया की 'रील्स' नहीं, बल्कि खोखले सम्मान की रक्षा में की गई थी। यह घटना हमें दर्शनशास्त्र के उस बिंदु पर लाकर खड़ा करती है, जहां व्यक्ति स्वतंत्रता को नियंत्रण से बदल देता है और सम्मान को स्वामित्व से। अस्तित्ववादी दृष्टिकोण से देखें, तो पिता अपनी सामाजिक असफलता का उत्तर दूसरों की सफलता को समाप्त करके देना चाहता था। राधिका का अपराध केवल यह था कि वह आत्मनिर्भर थी और पुरुष-सत्तात्मक ढांचे से बाहर निकल कर अपनी पहचान गढ़ रही थी।

- अवनीश कुमार गुप्ता, आजमगढ़

आतंक का चेहरा

फरवरी 2019 में जम्मू-कश्मीर के पुलवामा में हुए आतंकी हमले में भारतीय सेना के 40 निर्दोष जवानों की जानें चली गईं थीं। वैश्विक आतंकवाद वित्तपोषण निगरानी संस्था अर्थात एफएटीएफ ने रहस्योद्घाटन किया है कि इस हमले में प्रयुक्त विस्फोटक आनलाइन सेवाओं के माध्यम से मंगाया गया था। यह जानकारी देश की जांच एजंसियों के लिए निश्चित ही महत्त्व की हो सकती है। मगर जनता यह जानना चाहती है कि पुलवामा हमले के लिए भारी मात्रा में आरडीएक्स कहां से आया और विस्फोटक से भरी हुई गाड़ी सेना के अत्यंत सुरक्षित काफिले के बीच कहां से और कैसे पहुंच सकी। आज तक हमें इन स्वाभाविक प्रश्नों का उत्तर नहीं मिला है। इसी प्रकार पहलगाम के उन हमलावरों के बारे में कोई पुख्ता जानकारी नहीं है। कोई नहीं जानता कि वे कहां छिप गए हैं। हालांकि हमारी सेना ने आपरेशन सिंदूर के दौरान पाकिस्तान में आतंकी प्रशिक्षण केंद्रों को तहस-नहस कर दिया है।

- इशरत अली कादरी, भोपाल

भ्रष्टाचार के पुल

पुलों की गुणवत्ता की निगरानी, समयबद्ध जांच और जिम्मेदार एजंसियों की पारदर्शिता के अभाव में दुर्घटनाएं होना स्वाभाविक ही है। गुजरात में वडोदरा और आणंद को जोड़ने वाले करीब 40 साल पुराने पुल का एक हिस्सा ढह कर महिसागर नदी में धंस गया। कई लोगों की मौत हो गई। इस घटना ने बिहार में लगातार पुल दुर्घटनाओं की याद दिला दी है। चौंकाने वाली बात यह है कि इस पुल की मरम्मत पिछले साल ही की गई थी। यह न केवल तकनीकी खामी का संकेत है, बल्कि घोर लापरवाही, भ्रष्ट निर्माण प्रक्रिया और पूरी तरह से जवाबदेही के अभाव का भी उदाहरण है। देश भर में इस तरह के कमजोर पुलों की समय-समय पर सुध लेना समय की मांग है, ताकि फिर कोई अनहोनी न हो। वडोदरा में हुए हादसे को रोका जा सकता था, क्योंकि इस पुल में कंपन की शिकायत बहुत पहले की गई थी।

- अमृतलाल मारू 'रवि', इंदौर

हमें लिखें, हमारा पता : edit.jansatta@expressindia.com | chaupal.jansatta@expressindia.com

CCI NG 3.7 Product: NBTDelhiBS PubDate: 14-07-2025 Zone: Mahanagar Edition: 1 Page: NBTMAH10 User: dilip.lal Time: 07-13-2025 21:55 Color:

नवभारत टाइम्स

नवभारत टाइम्स । नई दिल्ली । सोमवार, 14 जुलाई 2025

ट्रंप का बदला

अमेरिका के सरकारी विभाग इस समय अपने दौर की सबसे बड़ी छंटनी से गुजर रहे हैं। कहने के लिए ट्रंप प्रशासन सिस्टम में सुधार करना चाहता है, लेकिन स्टेट और जस्टिस डिपार्टमेंट में जिस तरह लोगों को टारगेट किया जा रहा है, वह सीधे-सीधे इसे राजनीतिक बदले की कार्रवाई बना देता है।

सबसे बड़ी छंटनी । ट्रंप एडमिनिस्ट्रेशन ने शुक्रवार को एक ही दिन में स्टेट डिपार्टमेंट के 1300 से ज्यादा कर्मचारियों को बाहर का रास्ता दिखा दिया। यहां से अभी तक 3000 से अधिक कर्मियों को बर्खास्त किया जा चुका है। इसी तरह जस्टिस डिपार्टमेंट में लगातार छंटनी चल रही है। बीते दिनों करीब 20 लोगों को निकाला गया। इनमें वकील, सुरक्षा अधिकारी और सपोर्ट स्टाफ के लोग थे।

AI Image

अमेरिका के हित में नहीं

दंगाइयों को माफी । 2020 के राष्ट्रपति चुनाव में हार स्वीकार न करने वाले डॉनल्ड ट्रंप के समर्थकों ने जनवरी 2021 में US Capitol Hill पर हमला किया था। इस हिंसा से पूरी दुनिया स्तब्ध रह गई थी, लेकिन ट्रंप इसे राजनीतिक विरोध कहते रहे। सत्ता में लौटते ही उन्होंने उस हिंसा में शामिल 1500 से ज्यादा लोगों को माफी दे दी। इसके उलट, उन अधिकारियों को सजा दी जा रही है जिन्होंने इस मामले की जांच या पैरवी की थी। ट्रंप के निशाने पर वे सभी हैं, जिन्होंने उनके खिलाफ किसी भी फेडरल मुकदमे में कोई भूमिका निभाई थी।

राज्यों में दखल । डॉनल्ड ट्रंप असहमति की गुंजाइश को खत्म कर रहे हैं, चाहे वह राजनीतिक हो या संस्थागत। यही वजह है कि डेमोक्रेटिक शासित राज्यों से उनका टकराव भी गहराता जा रहा है। हाल ही में जस्टिस डिपार्टमेंट ने मिनेसोटा की भर्ती प्रक्रिया पर जांच बैठाई है। इस राज्य पर ट्रंप प्रशासन की यह तीसरी कार्रवाई है। यह महज संयोग नहीं है कि मिनेसोटा के गवर्नर Tim Walz पिछले साल डेमोक्रेट्स की तरफ से उप-राष्ट्रपति पद के टिकट के दावेदार थे और ट्रंप के आलोचक रहे हैं।

इमेज को नुकसान । हार्वर्ड जैसी प्रतिष्ठित यूनिवर्सिटी पर लगाई गई बंदिशें हों या खुद का खड़ा किया DOGE - ट्रंप हर जगह पूर्ण नियंत्रण चाह रहे हैं, जो लोकतंत्र के लिए सही नहीं। इससे खुद अमेरिका की छवि को नुकसान पहुंच रहा है। मानवाधिकार, शरणार्थी नीति और विदेश मामलों से जुड़े विभागों में लगातार कटौती हो रही है। इससे अमेरिका की विदेश नीति को लेकर असमंजस की स्थिति है।

डर का माहौल । ट्रंप की कार्रवाई सिस्टम में सुधार लाने वाले नहीं, उसमें डर भरने वाली है। वह सत्ता का केंद्रीकरण कर रहे हैं। उनके कदम इस भरोसे को तोड़ रहे हैं कि प्रशासन निष्पक्षता के साथ और बिना डरे अपना काम कर सकता है।

चक्र-व्यू

गर शरबत न होता

राहुल पाण्डेय

अदबी इदारे में बेहद मशहूर उस्ताद शम्सुर्रहमान फारुकी का एक शाहकार है- कई चांद थे सरे आसमां। इसमें शरबत को लेकर एक सीन है, गौर फरमाइए- 'राहत अफ्जा जल्दी से आबदाराखाने में गई और फौरन चांदी की कश्ती में रखे हुए एक लंबे से, नक्काशीदार सुनहरे गिलास में शरबत लिए हुए फिरी। गिलास पर सरपोश पड़ा था, इसलिए शरबत की कैफियत मालूम न होती थी। वजीर को शरबत पेश करते हुए राहत अफ्जा ने कहा, लीजिए, इसे घूंट-घूंट करके पी जाइए। इंशाअल्लाह दिमाग रोशन हो जाएगा। वजीर ने कुछ झिझकते हुए सरपोश हटाया। अगवानी रंग का शरबत था। मुश्क और जाफरान का एक इशारा सा उसकी नाक में आया, बेहद नाजुक। वजीर ने एक घूंट पिया तो बहुत सर्द न था, लेकिन कई तरह के खुशगवार जायके और शायद एक-दो मसाले भी उस एक घूंट में इस तरह घुल-मिल गए थे कि हलक से उतारते ही उसे फरहत का अहसास हुआ गोया बदन में गुलाबी सी रोशनी फैल गई हो।' शरबत है ही ऐसी चीज, कि बनाने वाला हुनरमंद हो तो बदन में गुलाबी रोशनी फैल जाती है, और लिखने वाला उस्ताद हो तो मन में मसाले घुलते देर नहीं लगती।

शरबत जिस्मानी ही नहीं, रूहानी राहत भी देता है। शायद इसीलिए हमदर्द वालों ने अफजा के पहले रूह लगाया। ऐसा पेय जो आत्मा तक आनंद दे। यही वजह है कि संसार की ऐसी एक भी संस्कृति नहीं है, जिसमें शरबत ना हो। ना ही ऐसा कोई साहित्य है, जिसमें शरबत जैसी भाषा ना हो। और तो और, चिकित्सा शास्त्र भी शरबत के बगैर अधूरे ही हैं, चाहे वह आयुर्वेद हो या यूनानी। इन दिनों दिल्ली में गुलाब, खस, शहतूत से लेकर सत्तू तक का शरबत चल रहा है। पिछले दिनों बिहार के एक नेता जी को स्ट्रॉ से सत्तू का शरबत पीते देख मेरे एक मित्र के मुंह से बरबस निकल पड़ा कि बिहार अब मॉडर्न हो रहा है। पहाड़ में तो इन दिनों जैसे शरबत की बहार आ रखी है। बुरांश का शरबत आम है, किस्मत अच्छी हुई तो कभी-कभार शरबत में काफल के भी इशारे मिल जाते हैं। शरबत सादे पानी में स्वाद का इशारा ही तो है। पानी में मिला दो तो बदन में रोशनी फैल जाती है, कागज पर लिख दो तो मन में..

एकदा

वह मौन संवाद

फारसी सूफी संत बायजीद बसतामी जब पहली बार अपने गुरु के पास पहुंचे, तो आशा थी कि उन्हें गुरु की तरफ से कोई आदेश या दीक्षा मिलेगी। लेकिन गुरु ने उनकी ओर देखा तक नहीं। फिर भी बायजीद डिगे नहीं। वह प्रतिदिन मौन, श्रद्धा और समर्पण से गुरु के चरणों में बैठे रहते। इसी तरह गुरु के पास आते-जाते उनके एक वर्ष बीत गए। उसके बाद गुरु ने उनसे पूछा, 'यहां कैसे आए हो?' बायजीद ने उत्तर दिया, 'गुरुदेव, आप जानते हैं।' गुरु फिर मौन हो गए। इसी तरह बायजीद का अपने गुरु के पास आते-जाते एक और वर्ष बीत गया। उसके बाद गुरु ने पूछा, 'कुछ करना चाहते हो?' बायजीद बोले, 'मैं प्रतीक्षा कर रहा हूं, जब भी आप निर्देश देंगे, मैं समर्पित हो जाऊंगा।' फिर गुरु ने कुछ नहीं कहा। तीसरे वर्ष गुरु ने चुपचाप उनके कंधे पर हाथ रखा और कहा, 'जाओ बायजीद! तुम्हें जहां पहुंचना था, वहां पहुंच चुके। अब कुछ शेष नहीं।' लोग चकित थे। बिना दीक्षा, बिना संवाद वह कैसे सिद्ध हो गया? गुरु ने उत्तर दिया, 'बायजीद जब आया, तब वह पूरी तरह खाली था। न अपेक्षा, न प्रश्न, न अहं। वह स्वयं समर्पण बन गया, और यही उसकी साधना थी।' गुरु ने आगे कहा, 'बायजीद ने साधना नहीं की, वह साधना बन गया। जिसने अपना अहं गिरा दिया, वही परमात्मा तक पहुंचता है।' ऐसे शिष्य दुर्लभ होते हैं, और ऐसे गुरु भी, जो मौन से जीवन के रहस्य खोल देते हैं।

संकलन : ललित गर्ग

अलग-अलग राज्यों में पहले इस तरह के जो प्रयोग हुए, उनमें से ज्यादातर में असफलता ही हासिल हुई

मेडिकल कॉलेजों का PPP मॉडल ठीक है?

रीमा नागराजन

AI + Adobe Stock

देश में कई स्वास्थ्य केंद्र निजी हाथों में सौंपे जा रहे हैं। इसके पीछे 'सोच' यह है कि निजी क्षेत्र लोगों को बेहतर स्वास्थ्य सुविधाएं मुहैया कराएगा। माना जा रहा है कि इन प्राइवेट हाथों में जाने के बाद न केवल इन अस्पतालों का स्तर ऊंचा होगा बल्कि नए मेडिकल कॉलेज भी बनेंगे, जिनसे हजारों नए डॉक्टर निकलेंगे।

आइडिया में कितना दम । इस दिशा में पहली बड़ी प्रगति तब हुई, जब 2017 में भारत सरकार और नीति आयोग ने विश्व बैंक के साथ मिलकर इस योजना को हरी झंडी दिखाई कि 300 या उससे कम बिस्तरों वाले सरकारी अस्पताल प्राइवेट ऑपरेटरों को सौंप दिए जाएं, जो इनके पास मेडिकल कॉलेज बनवाएं। सभी राज्य सरकारों को यह आइडिया पसंद नहीं आया। कुल मिलाकर, अब तक 15 राज्यों ने इस मॉडल को अपनाया है। फिर भी, यह आइडिया इतना दमदार है कि पूछा जाता है, क्या यह गरीब भारतीयों को फायदा पहुंचा सकता है?

अतीत के अनुभव । इस नए पब्लिक प्राइवेट पार्टनरशिप के तहत प्राइवेट कंपनियों द्वारा चलाए जा रहे पूर्व सरकारी अस्पतालों में एक खास अनुपात में बिस्तर मुफ्त चिकित्सा के लिए रिजर्व रहते हैं। लेकिन अतीत में किए गए ऐसे प्रयोगों में दिखा कि सरकारें निजी कंपनियों से इस प्रावधान का पालन कराने में असफल रहीं।

नाकाम प्रयोग । कुछ PPP प्रयोग बुरी तरह नाकाम साबित हुए। मसलन, छत्तीसगढ़ सरकार ने 2002 में एस्कॉर्ट्स हार्ट इंस्टिट्यूट एंड रिसर्च सेंटर के साथ साझेदारी में कार्डिएक केयर सेंटर स्थापित किया था। लेकिन 2017 तक सरकार को इसे वापस अपने हाथों में लेना पड़ा। काफी पहले 1953 में स्थापित कस्तूरबा मेडिकल कॉलेज, मेंगलुरु जरूर PPP मॉडल की सफलता का उदाहरण है, लेकिन कर्नाटक में उसके बाद के सारे प्रयोग कड़वे अनुभव ही साबित हुए। इनमें से ज्यादातर नाकाम रहे और सरकार को कई MoU रद्द करने पड़े।

कई राज्यों में उत्साह । दिलचस्प है कि इसके बावजूद कर्नाटक सरकार PPP मोड में नौ नए मेडिकल कॉलेज खोलने जा रही है। इसका मतलब है नौ जिला अस्पतालों में इन्फ्रास्ट्रक्चर के लिए 1000 करोड़ रुपये से ऊपर का सरकारी खर्च होगा। उत्तर प्रदेश और आंध्र प्रदेश ने 16-16 और मध्य प्रदेश ने 12 ऐसे कॉलेज खोलने की घोषणा की है।

> **सवाल ज्यादा, जवाब कम**
> - निजी संचालकों को बेतहाशा मुनाफा
> - सरकारी अस्पतालों से महंगा इलाज
> - मेडिकल की पढ़ाई का खर्च ज्यादा

मुफ्त चिकित्सा या इंश्योरेंस । इस बिंदु पर समझने वाली एक अहम बात यह है कि जब सरकारें कहती हैं कि इलाज आयुष्मान या राज्य की खास इंश्योरेंस पॉलिसी के तहत होगा तो वे दरअसल सचाई छुपा रही होती हैं। इंश्योरेंस सिर्फ इन-पेशेंट ट्रीटमेंट और उसमें भी इलाज की खास प्रक्रियाओं को ही कवर करता है। साथ ही इसमें 5 लाख रुपये की अधिकतम सीमा होती है। इसका एक अच्छा उदाहरण पश्चिम बंगाल है, जहां PPP मोड के चार मेडिकल कॉलेज अस्पताल हैं। प्रति परिवार 5 लाख रुपये की अधिकतम सीमा के साथ राज्य सरकार की बीमा स्कीम इन्हें कवर करती है। लेकिन विशेषज्ञों का कहना है, अगर सरकारी अस्पतालों में मुफ्त चिकित्सा की सुविधा उपलब्ध है तो PPP मोड वाले अस्पतालों में कोई नहीं आएगा इलाज कराने।

इलाज महंगा । नैशनल सैंपल सर्वे ऑफिस (NSSO) रिपोर्ट, 2017-18 के मुताबिक बच्चों के जन्म के मामले छोड़ दिए जाएं तो अस्पताल में भर्ती के हर एक मामले में ग्रामीण क्षेत्रों के सरकारी अस्पतालों इलाज का औसतन खर्च 4,290 रुपये पड़ता है जबकि निजी अस्पतालों में 27,347 रुपये यानी छह गुना ज्यादा। शहरी क्षेत्रों के सरकारी अस्पतालों में यह खर्च 4887 रुपये बैठता है, जबकि निजी अस्पतालों में 38,822 रुपये यानी आठ गुना ज्यादा।

मेडिकल की महंगी पढ़ाई । PPP मोड में मेडिकल कॉलेज भले ज्यादा खुल जाएं, मेडिकल की पढ़ाई का खर्च उठाना सबके लिए संभव नहीं होगा। यूपी के सरकारी मेडिकल कॉलेजों में सालाना फीस करीब 40,000 रुपये है जबकि प्राइवेट कॉलेजों में यह औसतन 12 लाख रुपये पड़ती है।

बेतहाशा कमाई । कोलकाता के पास स्थित हावड़ा में एक PPP मोड में कॉलेज चलाने वाला प्राइवेट ग्रुप एक बैच के स्टूडेंट्स से सालाना कम से कम 26 करोड़ रुपये वसूलता है। अस्पताल के बिस्तरों के इस्तेमाल की एवज में यह सरकार को सालाना करीब 9 करोड़ रुपये देता है। ऐसे ही गुजरात में चार जिला अस्पताल 1 रुपये की प्रतीकात्मक कीमत पर 33 साल के लिए निजी हाथों में सौंप दिए गए और सरकार यहां मेडिकल कॉलेज बनाने में करीब 290 करोड़ रुपये खर्च करने वाली है। इनमें से तीन कॉलजों ने ट्यूशन फीस के तौर पर पहले साल औसतन 6.5-6.5 करोड़ रुपये और दूसरे साल 16-16 करोड़ रुपये वसूले। इन कॉलेजों के जबर्दस्त मुनाफे का आसानी से अंदाजा लगाया जा सकता है।

बहरहाल, स्वास्थ्य क्षेत्र में इस तरह के प्रयोग पर कोई नतीजा निकालना अभी जल्दबाजी है, लेकिन इतना तय है कि मुफ्त बिस्तरों से मुकाबले सवाल कहीं ज्यादा हैं। ऐसे सवाल जिन पर केंद्र और राज्य सरकारों को गंभीरता से विचार करना चाहिए।

उम्र का इशारा कहीं ग़लत तो नहीं समझ रहे

AI Image

जीवन आनंद

शैलेंद्र पांडेय

विराट कोहली की दाढ़ी अब ज्यादा तेजी से सफेद हो रही है। जो दाढ़ी टीम इंडिया का फैशन स्टेटमेंट बन चुकी है, जब उसे हर चार दिन में रंगने की जरूरत आन पड़े तो...? विराट ने ही बताया कि, 'तो समझ जाओ वक्त आ गया।' बढ़ती उम्र अपने पीछे निशान छोड़ती चलती है। इनको मिटाया नहीं, बस छुपाया ही जा सकता है। और यही बात टेंशन दे जाती है कई लोगों को। लेकिन, क्या समय के साथ सीनियर होते जाना इतना बुरा है?

स्वीडिश एक्ट्रेस Ingrid Bergman ने बहुत ही खूबसूरत बात कही है उम्र को लेकर, 'उम्र का बढ़ना ऐसा है, जैसे पहाड़ पर चढ़ना - आपको सांस लेने में थोड़ी दिक्कत होती है, लेकिन नजारा अच्छा दिखता है।' और जब नजारा अच्छा हो, तो आनंद मिलता ही है। और यही सच्चाई है उम्र की - अगर नजरिया सही हो, तो हर बढ़ती उम्र एक नई ऊंचाई जैसी होती है, जहां से जिंदगी ज्यादा साफ, ज्यादा सलीके से दिखती है।

हम अक्सर जवानी को महिमामंडित करते हैं - जोश, उत्साह, ऊर्जा। हालांकि समय के साथ जो चीजें हमारे भीतर पनपती हैं, वो कहीं अधिक कीमती होती हैं। हर बीता साल हमें अनुभवों की सौगात देता है। हम जिंदगी को बेहतर समझते जाते हैं - उसकी जटिलताओं को, रिश्तों की गहराई को और खुद से संवाद करने की कला को। अनुभव हमें रिएक्शन से रेस्पॉन्स की ओर ले जाता है।

उम्र बढ़ने के साथ ठहराव आता है। जोश की जगह विवेक आ जाता है। हम जानते हैं कि कब बोलना है, कब चुप रहना है, और कब बस मुस्कुरा कर उस पल को बीत जाने देना है। हम कम गलतियां करते हैं, क्योंकि पहले की गई गलतियों से बहुत कुछ सीख चुके होते हैं। यही सीख हम दूसरों के साथ बांट सकते हैं। कई मामलों में सर्टिफिकेट है उम्र - कि आपकी राय बेशकीमती है, कि आप जो बता रहे वह बस हवा-हवाई नहीं, कि आपकी बात पर भरोसा किया जा सकता है।

उम्र सशक्त बनाती है, फैसले लेने की आजादी दिलाती है। छोटे अक्सर बड़ों के साये में चलते हैं। उनका कहा करते हैं, उनके पीछे बढ़ते हैं। लंबा समय बीत जाता है यूं ही दूसरों को फॉलो करने में। करियर, समाज, परिवार, दोस्त - सबके बीच बैलेंस बनाना और सभी को खुश करना - उम्र को भी पता नहीं चलता कि वह कब इनमें खप गई। लेकिन, जैसे ही वह थोड़ा पकती है, उसे फॉर्म्युला मिलने लगता है बैलेंस बनाने का। आत्मनिर्भरता आती है और फैसले लेने की आजादी भी। तब पता चल जाता है कि साहस और बेवकूफी में कितना महीन अंतर है।

बचपन में हम हमेशा जवाब ढूंढते हैं, लेकिन उम्र के साथ हम खुद जवाब बन जाते हैं। अपने से छोटों को राह दिखा पाना, उन्हें अपने अनुभवों से फायदा पहुंचा पाना - यह सम्मान भी उम्र के साथ ही हासिल होता है।

हर गुजरता साल हमें न केवल परिपक्व बनाता है, बल्कि समाज में एक गरिमा भी देता है। लोग हमारी बात सुनते हैं, राय मांगते हैं, और हमें एक ऐसे इंसान की तरह देखने लगते हैं, जिसने जीवन के कई रंग देखे हैं। ये रंग भी जरूरी हैं खुशियों के लिए।

> **शेयर करें अपना अनुभव**
> जीवन की दिनचर्या के अनुभवों में आप कैसे आनंद महसूस करते हैं, भेजिए इस मेल आईडी पर nbtreader@timesofindia .com और सब्जेक्ट में लिखें 'जीवन आनंद'

ELI योजना से क्या फ़ायदा होगा

हिरण्मय पंड्या

भारत सरकार द्वारा हाल ही में स्वीकृत की गई रोजगार से जुड़ी व हुप्रतीक्षित प्रोत्साहन (ELI) योजना देश की श्रमशक्ति के लिए एक स्वागत योग्य राहत है।

प्रोत्साहन की पहल। ELI पिछले वर्ष शुरू की गई सरकार की इंटर्नशिप एवं कौशल विकास योजनाओं जैसी मौजूदा पहल का पूरक है। कुल मिलाकर इन कार्यक्रमों का उद्देश्य विशेष रूप से नौकरी की सुलभता और सामाजिक सुरक्षा कवरेज के मामले में ऐतिहासिक रूप से पिछड़े टियर 2 और टियर 3 वाले शहरी युवाओं के लिए रोजगार क्षमता को बेहतर बनाना, औपचारिक रोजगार की राह तैयार करना तथा श्रम सुरक्षा को मजबूत करना है। कर्मचारियों के खातों में सीधे योगदान देकर, यह योजना नियोक्ताओं के लिए औपचारिकीकरण की लागत को कम करती है और युवाओं व पहली बार काम करने वाले कर्मियों को औपचारिक श्रमशक्ति का हिस्सा बनने के लिए प्रोत्साहित करती है।

AI Image

संबंधों की प्रकृति । ELI योजना का सबसे सराहनीय पहलू यह है कि यह औपचारिक रोजगार और वित्तीय साक्षरता से जुड़े 15,000 रुपये तक के प्रत्यक्ष प्रोत्साहन के जरिए नौकरियों में प्रवेश करने वाले नए लोगों को सशक्त बनाने पर केंद्रित है। औपचारिकीकरण केवल वेतन-भुगतान से संबंधित अनुपालनों तक ही सीमित नहीं है, बल्कि यह नियोक्ता-कर्मचारी के बीच के संबंधों की प्रकृति को भी मौलिक रूप से बदल देता है।

ढांचे में ढली । इसकी एक प्रमुख विशेषता यह है कि यह भारत के कौशल एवं रोजगार के व्यापक ढांचे के अनुरूप ढली हुई है। इससे ऐसा रोजगार सुनिश्चित होता है जो टिकाऊ और सशक्त दोनों हो। वित्तीय साक्षरता, अप्रेंटिसशिप कार्यक्रमों, ITI सुधारों और भर्ती से जुड़े कौशल (प्लेसमेंट लिंक्ड स्किलिंग) को जोड़कर यह योजना कौशल हासिल करने से लेकर गरिमापूर्ण काम पाने तक का एक साफ रास्ता बनाती है।

अधिकार और कर्म । यह योजना सही साधन प्रदान करती है, लेकिन इसकी सफलता इस बात पर निर्भर है कि यूनियन, राज्य और अन्य संगठनों जैसे सभी हितधारक इसके साथ किस प्रकार जुड़ते हैं। यह योजना ट्रेड यूनियनों को नए औपचारिक श्रमिकों के साथ जुड़ाव बढ़ाने का मौका देती है, जिससे यह सुनिश्चित होता है कि वे अपने अधिकारों के प्रति जागरूक हों और अपने कार्यस्थलों को आकार देने में सार्थक रूप से भाग ले सकें। रोजगार सृजन के साथ-साथ कार्यस्थल पर मजबूत लोकतंत्र, बेहतर श्रम-प्रबंधन संवाद और समस्याओं के समाधान में सहयोगात्मक रवैये को बढ़ावा दिया जाना चाहिए।

सहयोग की शक्ति । जैसे-जैसे हम विकसित भारत@2047 के सपने को साकार करने की दिशा में आगे बढ़ रहे हैं, हमारा लक्ष्य विकास या औद्योगिक विस्तार से परे एक कुशल, संरक्षित, प्रेरित तथा अर्थव्यवस्था में औपचारिक रूप से समन्वित श्रम शक्ति का निर्माण करना होना चाहिए। ELI योजना इसी दृष्टिकोण के अनुरूप है और यह एक ऐसे भविष्य की नींव रखती है जहां युवा सशक्त और औद्योगिक संबंध सहयोगात्मक हों।

(लेखक भारतीय मजदूर संघ के अध्यक्ष हैं)

सांचा बदलने वाली सोच

प्रणव प्रियदर्शी

कहते हैं, 'कुछ सांचों में ढल गए और कुछ सांचे बदल गए'। नित्या राजगोपालन का नाम उन लोगों में आता है जो सांचे बदलने का दम रखते हैं। लिंक्डइन की यूएस-इंडिया लीड, डायरेक्टर (सॉफ्टवेयर इंजीनियरिंग) नित्या की बात सुनें तो समझ में आ जाता है कि कुछ चमकते उदाहरण सांचों की समस्या को दूर नहीं करते। सांचा अपनी जगह बरकरार रहता है और अपने ढंग से जीने की चाहत लिए लोग उसके अनुरूप ढलने को मजबूर होते रहते हैं। यही वजह है कि नित्या जैसी कुछ मिसालें इस हकीकत को नहीं बदल सकतीं कि देश में पढ़ लिख कर खुद को काबिल बनाने वाली लड़कियों का बड़ा हिस्सा, पहले जॉब के बाद ही वर्कफोर्स से बाहर हो जाता है। लिंक्डइन डेटा की ही बात करें तो शुरू में यानी एंट्री लेवल पर वर्कफोर्स में बैचलर और मास्टर डिग्री से लैस लड़कियों का प्रतिशत 40 से ज्यादा होता है। लेकिन लीडरशिप रोल में उनका प्रतिशत 30 से ऊपर नहीं बैठता। और समस्या सिर्फ अपने देश तक सीमित नहीं है। WEF ग्लोबल जेंडर गैप रिपोर्ट बताती है कि वर्कफोर्स पार्टिसिपेशन और लीडरशिप हायरिंग में लड़कियों का प्रतिशत नीचे गिरते हुए 2018 के स्तर के करीब आ गया है।

नित्या राजगोपालन

आधी दुनिया

नित्या कहती हैं, वह इस मायने में खुशकिस्मत रही हैं कि उन्हें अच्छे मेंटॉर मिले। ऐसा मौका हर किसी को नहीं मिलता। उन मौकों तक पहुंचने का जज्बा, वैसा संकल्प भी हर किसी में नहीं होता, लेकिन इसी बिन्दु पर तो सांचों की भूमिका बनती है। समाज में प्रचलित सोच का पूर्वाग्रह अक्सर ऊंचे पदों पर बैठे लोगों को लड़कियों की खूबी नहीं देखने देता। यह पूर्वाग्रह लड़कियों को इंजीनियर नहीं, पत्नी, मां, बहू के रूप में देखता और परिवार के अंदर की भूमिकाओं में धकेलने या खींचने को जैसे बेकरार रहता है। हमें इस पूर्वाग्रह से बने सांचों को बदलने वाली अधिक से अधिक नित्याएं चाहिए।

THE SPEAKING TREE

और पढ़ने के लिए देखें
www.speakingtree.nbt.in

कल जब होता ही नहीं, तो फिर आगे की चिंता क्यों

जयति गोयल

श्रीकृष्ण ने गीता में कहा है, 'भविष्य का दूसरा नाम है संघर्ष।' मन में आज कोई इच्छा होती है और यदि वह पूरी नहीं हो पाती तो हमारा मन भविष्य में उसे पूरा करने की योजना बनाता है। फिर कल्पना करता है कि भविष्य में इच्छा पूर्ण होगी। लेकिन जीवन न तो भविष्य में है, न ही अतीत में। जीवन तो इस क्षण का नाम है। यानी इस क्षण का अनुभव ही जीवन का अनुभव है। पर हम सब यह जानते हुए भी इतना-सा सत्य समझ नहीं पाते। या तो हम बीते हुए समय की यादों को घेर कर बैठे रहते हैं या फिर आने वाले समय के लिए योजनाएं बनाते हैं और जीवन ऐसे ही बीत जाता है।

एक सत्य हम अपने मन में उतार लें कि न तो हम भविष्य देख सकते हैं, न ही भविष्य बना सकते हैं - हम सिर्फ धैर्य और साहस के साथ आने वाले समय का आलिंगन कर सकते हैं। यह जीवन का सबसे बड़ा सत्य भी है। और यदि इतना सत्य समझ लें तो क्या जीवन का हर पल आनंद से नहीं भर जाएगा? बिलकुल आपका जीवन आनंद से भर जाएगा। लेकिन इससे भी इनकार नहीं किया जा सकता कि आज जिसे देखिए वही अपना भविष्य जानने की इच्छा रखता है और इसी कारण पंडितों, ज्योतिषियों के पीछे भागता रहता है। वह सिर्फ इसलिए कि उन्हें अपने भविष्य के बारे में जानकारी मिल जाए। जब हम कल को जान नहीं सकते तो भविष्य की बातें जानने के पीछे क्यों भागना।

कुछ ऐसे भी हैं, जो लोगों का मनगढ़ंत भविष्य बताते हैं या ग्रह-नक्षत्र से डरा देते हैं। आखिर क्यों अपना भविष्य जानने की इतनी उत्सुकता रहती है, जबकि भविष्य का तो कोई अस्तित्व ही नहीं! जो अभी है नहीं, उसके बारे में कैसे कोई बता सकता है? ज्योतिषाचार्यों की महंगी फीस, महंगे व गलत उपायों से धोखे में जीते हैं। व्यापार का रूप देकर धन कमाने के लालच में झूठी भविष्यवाणी करके शोषक वर्ग शोषण के धंधे में लग गया। जो भविष्यवाणी सच नहीं होती, उसके भी मनगढ़ंत कारण गढ़ लेते हैं और सच हो गया तो बढ़ा-चढ़ाकर बखान किया जाता है।

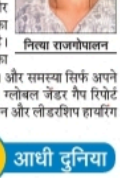

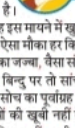

हममें से कई लोग चिंता करते हैं कि कल क्या होगा, लेकिन यह भूल जाते हैं कि वास्तव में इस दुनिया में किसी ने कल नहीं देखा है। जब भी देखिए आपको आज ही दिखेगा। जो समय बीत गया, वह कल था। हमारे हाथों में केवल वर्तमान है और कल कुदरत के हाथों में। जिएं केवल वर्तमान में। कल की चिंता करना कठिनाइयों का कारण बनता है। कल जैसी कोई चीज ही नहीं। हमें एक दृष्टिकोण विकसित करना चाहिए कि हमारे रास्ते में जो भी आएगा, उसे हम स्वीकार करेंगे।

जीवन को सरल, सच्चा और कर्मशील बनाइए। डर और भ्रम से नहीं, साहस और विवेक से अपने हर दिन का स्वागत कीजिए, क्योंकि यह क्षण ही जीवन है।

रीडर्स मेल

www.edit.nbt.in

■ मीडिया को न कोसें

12 जुलाई का लेख 'मीडिया को गाली देना हल नहीं' पढ़ा। आज के डिजिटल युग में मीडिया की परिभाषा बदल गई है। अब मोबाइल फोन इस्तेमाल करने वाला हर व्यक्ति अपने-आप में 'मीडिया' बन गया है। ऐसे में यूट्यूबर्स, इंफ्लुएंसर्स और पैपराजी की भीड़ में गुणवत्ता और जिम्मेदारी का अभाव स्पष्ट दिखता है। कुछ लोग व्यूज के लिए झूठी, अश्लील या असंवेदनशील खबरें फैलाते हैं, जिससे पूरी मीडिया की साख को ठेस पहुंचती है। लेकिन क्या सभी को एक ही तराजू में तौलना उचित है? हमारी भी जिम्मेदारी बनती है कि हम विवेक से चुनें कि क्या देखना है, और किसे समर्थन देना है। मीडिया की आलोचना के साथ-साथ हमें यह भी देखना होगा कि कहीं हमारी पसंद ही उस भेड़चाल को तो नहीं बढ़ा रही। बदलाव की शुरुआत दर्शकों की सोच से ही होगी।

पायल राजपूत, ईमेल से

■ अमेरिका की साख

द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद से ही अमेरिका विश्व राजनीति में प्रमुख शक्ति रहा है, लेकिन डॉनल्ड ट्रंप के कार्यकाल ने उसकी वैश्विक छवि को झटका दिया। उनकी नीतियां और बयान अक्सर असंगत व व्यापारिक दृष्टिकोण से प्रेरित लगे, जिससे अमेरिका की विश्वसनीयता पर प्रश्न उठे। भारत-पाक संबंध, ईरान-इस्राइल तनाव या रूस-यूक्रेन युद्ध जैसे मुद्दों पर ट्रंप का रवैया अस्पष्ट और अवसरवादी रहा। भारत को उनसे अनेक उम्मीदें थीं, लेकिन कई मामलों में उनकी भूमिका निराशाजनक रही। ट्रंप युग में अमेरिका की साख को धक्का जरूर पहुंचा है।

विजय किशोर तिवारी, नई दिल्ली

nbtedit@timesofindia.com पर अपनी राय नाम-पते के साथ मेल करें।

अंतिम पत्र

राजधानी में मर्डर बढ़े, लूट और झपटमारी कम - एक खबर
- राहत की सांस लें या खौफ का अहसास करें!

दिनेश गुप्ता

चिंतन

मतदाता सूची के पुनरीक्षण से अवैध वोटरों की होगी पहचान

भारत अवैध प्रवासियों की समस्या से जूझता रहा है। ऐसे में एक नियमित अंतराल पर मतदाता पहचान पत्र की जांच-पड़ताल होते रहनी चाहिए। अभी चुनाव आयोग बिहार में मतदाता सूचियों की जांच के लिए विशेष गहन पुनरीक्षण (एसआईआर) अभियान चला रहा है। इस अभियान में बिहार की मतदाता सूची में बड़ी संख्या में नेपाल, बांग्लादेश और म्यांमा के लोग मिले हैं। इसके अलावा भी कई तरह की अनियमितताएं मिल रही हैं, जिन्हें सुधारा जा रहा है। बिहार में वर्ष 2003 के बाद अब 22 वर्ष पश्चात मतदाता सूची का पुनरीक्षण किया जा रहा है। हालांकि इस पर विपक्ष जमकर राजनीति कर रहा है और सरकार को इसकी टाइमिंग को लेकर घेर रहा है। मामला सुप्रीम कोर्ट पहुंचा तो शीर्ष अदालत ने भी इसकी टाइमिंग पर सवाल उठाया, लेकिन इस कवायद को गलत नहीं कहा। केंद्रीय चुनाव आयोग ने ऐलान किया है कि अब समूचे देश में मतदाता सूचियों का पुनरीक्षण होगा। चुनाव आयोग 28 जुलाई के सुप्रीम कोर्ट के फैसले का जरूर इंतजार करेगा। आयोग ने राज्यों को जो तैयारी का निर्देश दिया है, उसके मुताबिक अगस्त से देशभर में मतदाता सूची पुनरीक्षण अभियान शुरू हो जाएगा। यह जरूरी कदम है और इसका स्वागत होना चाहिए। इससे देश के अंदर दोहरी मतदाताओं की प्रवृत्ति पर रोक लगेगी। देश में मतदाताओं की एक्चुअल संख्या का पता चलेगा। मतदाता सूची का आधार से लिंक किया जाना चाहिए। सुप्रीम कोर्ट ने आधार कार्ड, राशन कार्ड व वोटर लिस्ट को पहचान पत्र के दायरे में शामिल करने का निर्देश दिया है, जिसे चुनाव आयोग ने शामिल किया है। सरकार को चाहिए कि हर नागरिकों के लिए बायो आधारित एकीकृत राष्ट्रीय पहचानपत्र सिस्टम लागू हो। इसे आधार को ही विस्तारित रूप देकर किया जा सकता है। फिंगर प्रिंट और आई चित्र के साथ एकीकृत राष्ट्रीय पहचान पत्र में आधार की व्यक्तिगत सूचना से लेकर ब्लड ग्रुप, मतदाता सूची, राशन कार्ड, बीपीएल व एपीएल और पासपोर्ट संबंधी जानकारी आदि को समाहित किया जा सकता है। इससे हर नागरिक को केवल एक पहचानपत्र संभालना होगा, सरकारी कामकाज में भी आसानी होगी। सरकार के पास अपने सभी नागरिकों का वृहद जानकारी से लैस डेटा होगा। बिग डेटा सिस्टम से यह सब डिजिटल रखने में आसानी होगी। चुनाव आयोग ने बिहार में फैसला किया है कि मतदाता सूची पुनरीक्षण के दौरान उचित जांच के बाद 30 सितंबर को प्रकाशित होने वाली अंतिम मतदाता सूची में अवैध प्रवासियों के नाम शामिल नहीं किए जाएंगे। निर्वाचन आयोग अंततः पूरे भारत में मतदाता सूचियों का एक विशेष गहन पुनरीक्षण करेगा ताकि विदेशी अवैध प्रवासियों के जन्मस्थान की जांच करके उन्हें बाहर निकाला जा सके। बिहार में इसी साल चुनाव होने वाले हैं, जबकि अन्य पांच राज्यों असम, केरल, पुडुचेरी, तमिलनाडु और पश्चिम बंगाल में 2026 में विधानसभा चुनाव होने हैं। हाल में विभिन्न राज्यों में बांग्लादेश और म्यांमा सहित अवैध विदेशी प्रवासियों के खिलाफ कड़ी कार्रवाई के बाद यह कदम खास महत्व रखता है। अधिकांश राज्यों ने 2002 और 2004 के बीच मतदाता सूचियों का पुनरीक्षण किया था, उत्तराखंड ने 2006 में तो दिल्ली ने 2008 में किया था। इतने कालखंड में मतदाताओं की स्थिति बदल जाती है, कुछ की मौत हो जाती है, कुछ नए जुड़ जाते हैं। आगे जनगणना होनी है और परिसीमन होना है, ऐसे में वोटर लिस्ट पुनरीक्षण काफी मायने रखता है।

पुरातत्व सर्वेक्षण
प्रमोद भार्गव

भूगर्भ में अंगड़ाई लेती सरस्वती के प्रमाण

राजस्थान के डीग जिले के बहज गांव में भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण जस्थान के डीग जिले के बहज गांव में भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण द्वारा जारी उत्खनन में 5500 से भी ज्यादा साल पुरानी प्राचीन भारतीय सभ्यता के अनेक अवशेष मिले हैं। इनमें सबसे प्रमुख ऋग्वेद में वर्णित सबसे प्रसिद्ध सरस्वती नदी प्रणाली के ठोस प्रमाण एक बार फिर मिले हैं। अवशेषीय अध्ययन के बाद ओएनजीसी ने राजस्थान के जैसलमेर से सात किलोमीटर दूर जमीन में करीब 550 मीटर तक गहरा छेद किया। यहां 7600 लीटर प्रति घंटे की दर से स्वच्छ जल निकला। अध्ययन में पता चला कि हरियाणा व राजस्थान में करीब 200 स्थलों पर सरस्वती के पानी के निशान हैं।

राजस्थान के डीग जिले के बहज गांव में भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण द्वारा जारी उत्खनन में 5500 से भी ज्यादा साल पुरानी प्राचीन भारतीय सभ्यता के अनेक अवशेष मिले हैं। इनमें सबसे प्रमुख ऋग्वेद में वर्णित सबसे प्रसिद्ध सरस्वती नदी प्रणाली के ठोस प्रमाण एक बार फिर मिले हैं। इस खुदाई में ब्राह्मी लिपि की मोहरों, मूर्तियों, हड्डी के औजार, शंख, मोती, चूड़ियां और सिक्कों के साथ मिट्टी के खंभों से बने भवन, ईंटों की परतदार दीवारों वाली खंदकें, भठियां एवं यज्ञवेदियां भी मिली हैं। इन साक्ष्यों से प्रमाणित होता है कि उस समय के लोग वास्तुकला के साथ धातु विज्ञान और हथियार बनाने में दक्ष थे।

ऋग्वेद में वर्णित सिंधु-सारस्वत सभ्यता में इन सब वस्तुओं और सरस्वती नदी से जुड़े अनेक मंत्र मिलते हैं। इन्हीं मंत्रों से प्राचीन आर्यावर्त का भूगोल, समाज, जीवनशैली और आर्य व अनार्यों के संघर्ष से जुड़ी अनेक गाथाओं का जीवंत चित्रण है। इन अवशेषों और नदी-तंत्र को 3500 ईसा पूर्व से 1000 ईसा पूर्व तक की सभ्यता के प्रमाण माना जा रहा है। वैदिक कालीन नदी सरस्वती के अस्तित्व और उसकी भूगर्भ में अंगड़ाई ले रही जलधारा को लेकर भूगर्भशास्त्री, पुरातत्ववेत्ता और इतिहासकारों में लंबे समय से मतभेद बना रहा है। यह मतभेद सैटेलाइट मैपिंग के बावजूद कायम रहा। अब न केवल हरियाणा के यमुनानगर जिले के आदिबद्री में सरस्वती का उद्गम स्थल खोज लिया गया है, बल्कि मुगलवाली गांव में धरातल से सात फीट नीचे तक खुदाई करके नदी की जलधारा भी खोज निकाली है। इस धारा का रेखामय प्रवाह तीन किमी की लंबाई में नदी के रूप में सामने आया था। एक मृत पड़ी नदी के इस पुनर्जीवन से उन सब अटकलों पर विराम लगा है,जो वेद-पुराणों में वार्णित इस नदी को या तो मिथकीय ठहराते थे या इसका अस्तित्व अफगानिस्तान की 'हेलमंद' नदी के रूप में मानते थे।

सरस्वती की भौगोलिक स्थिति का बखान ऋग्वेद, शतपथ ब्राह्मण महाभारत, ऐतरेय ब्राह्मण, भागवत और विष्णु पुराणों में है। ऋग्वेद में सप्तसिंधु क्षेत्र की महिमा को प्रस्तुत करते हुए जिन सात नदियों का वर्णन किया गया है, उनमें से एक सरस्वती है। अन्य छह शतद्रु;सतलुज, विपासा;व्यास, असिकिनी;चिनाव, पुरुष्णी;रावी वितस्ता;झेलम द्ध और सिंधु नदियां हैं। इनमें सरस्वती और सिंधु बड़ी नदियां थीं। सतलुज और यमुना सरस्वती की सहायक नदियां रही हैं। सरस्वती का प्रवाह पूरब से पश्चिम की ओर था, लेकिन हजारों साल पहले आए भयंकर भूकंप के कारण यमुना और सतलुज सरस्वती से अलग हो गईं। इन दोनों नदियों के मार्ग बदलने के बाद सरस्वती धीरे-धीरे अस्तित्व खोती हुई भूगर्भ में विलीन हो गई। कुछ भूगर्भशास्त्रियों का ऐसा मानना है कि 12 हजार साल पहले तक नदी स्वच्छ जलधारा के रूप में प्रवाहमान थी। लेकिन ऋग्वेद और अन्य प्राचीन ग्रंथों में सरस्वती की महिमा का गुणगान है, उससे लगता है पांच से सात हजार साल पहले तक यह नदी धरा पर बहती थी, क्योंकि नदी के धरती की कोख में समा जाने का वर्णन ऋग्वेद में नहीं है। जबकि ऋग्वेद की 60 ऋचाओं में सरस्वती का उल्लेख है। इनमें कहा गया है, सरस्वती हिमालयी पर्वतों से निकलकर, सप्तसिंधु क्षेत्र में बहती हुई कच्छ के रण में जाकर समुद्र में गिरती है। यह क्षेत्र वर्तमान में पाकिस्तान और भारत के पंजाब

व हरियाणा में है। किंतु सरस्वती का जो वर्णन महाभारत में है, उसमें इस नदी के विलोप होने के संकेत मिलते हैं। महाभारत के अनुसार सरस्वती समुद्र में समाने से पहले राजस्थान के रेगिस्तान विनसन में ही लुप्त हो जाती है। कॉर्बन डेटिंग भी इस तथ्य की पुष्टि करती है कि 2000 से 1800 वर्ष ईसा पूर्व यह नदी विलुप्त हुई। महाभारत, विष्णु पुराण,भागवत पुराण और ऐतरेय ब्राह्मण ग्रंथों की रचना लगभग इसी समय हुई बताई जाती है। साफ है, प्राचीन संस्कृत ग्रंथों में सरस्वती का जो वर्णन है, वह कपोल कल्पित न होते हुए,वास्तविक है। नदी के सूखने के बाद हड़प्पा-मोहन जोदड़ो संस्कृति के उपासक गंगा यमुना के मैदानों की ओर पलायन कर गए। चूंकि इन लोगों की स्मृति में सरस्वती जीवंत थी, इसलिए इन्होंने प्रयाग में त्रिवेणी स्थल पर गंगा और यमुना के साथ सरस्वती के अंतःसलिला होने की कथा गढ़ ली। सिंधु घाटी सभ्यता का नाम, हालांकि सिंधु नदी के नाम पर पड़ा था। इसे ही सरस्वती संस्कृति, सरस्वती सभ्यता और सिंधु सरस्वती सभ्यता के नामों से जाना जाता है। इसी सभ्यता में हड़प्पा संस्कृति फली-फूली थी। ऋग्वेद में हड़प्पा दुर्ग की गाथा हरियूपिया नाम से मंत्रों में कही गई है। प्राचीन ग्रंथों में दर्ज सरस्वती के अस्तित्व को लेकर देशी-विदेशी भूविज्ञानी और भारतीय संस्कृति के अध्येता इसकी शोध और जमीनी खोज में जुटे रहे हैं। फ्रांस के भूविज्ञानी विवियेन सेंट मार्टिन ने 'वैदिक भूगोल' की रचना की थी। 1860 में लिखी इस पुस्तक में सरस्वती के साथ घग्गर और हकरा की भी पहचान की थी। इसके बाद 1886 में अंग्रेजी हुकूमत ने भारत का भौगोलिक सर्वेक्षण कराया था। इसके अधीक्षक आरडी ओल्ड्हम की रिपोर्ट बगांल के एशियाटिक सोसायटी जर्नल में छपी थी। इस रिपोर्ट में सरस्वती के नदी तल और इसकी सहायक नदियों, सतुलज व यमुना के पथ रेखांकित किए गए हैं। 1893 में इस रिपोर्ट ने प्रसिद्ध भूवैज्ञानिक सीएफ ओल्ड्हम को प्रभावित किया। ओल्ड्हम ने इसी जर्नल में सरस्वती के भुगर्भ में उपस्थित होने की पुष्टि की है। साथ ही घग्गर और हकरा के सूखे पथों का भी ब्यौरा दिया है। ये नदियां पंजाब में बहती थीं। पंजाब की लोकश्रुतियों में आज भी ये नदियां विद्यमान हैं। इन्हीं नदियों के पथ पर एक समय सरस्वती बहती थी।

इसके बाद 1918 में टैसीटोरी, 1940-41 में औरेल स्टाइन और 1951-53 में अमलानंद घोष ने सरस्वती की खोज में अहम भूमिका निभाई। इन सब विद्वानों ने अपने निष्कर्षों में सिद्ध किया कि सरस्वती के विलोपन का मुख्य कारण सतलुज और यमुना की धार बदलना था। सतलुज की धार सरस्वती से अलग होकर सिंधु में जा मिली। लगभग इसी समय यमुना ने भी अपनी धारा का प्रवाह बदल दिया और वह पश्चिम में अपने बहने का रुख बदलकर पूर्व में बहकर गंगा में जा मिली। नतीजतन सरस्वती सूखती चली गई। हिमाचल प्रदेश में सिरमौर जिले के काला अंब के पास सरस्वती टियर फाल्ट का अध्ययन किया गया। अध्ययन के परिणाम में पाया कि हजारों साल पहले आए भूकंप के कारण यमुना और सतलुज ने अपने मार्ग बदल दिए थे। यमुना पूरब में बहती हुई दिल्ली पहुंच गई और सतलुज पश्चिम होते हुए सिंधु नदी में जा मिली। जबकि पहले इन दोनों नदियों का पानी सरस्वती में मिलकर हरियाणा, राजस्थान व गुजरात होते हुए कच्छ में मिलता था। अवशेषीय अध्ययन के बाद ओएनजीसी ने राजस्थान के जैसलमेर से सात किलोमीटर दूर जमीन में करीब 550 मीटर तक गहरा छेद किया। यहां 7600 लीटर प्रति घंटे की दर से स्वच्छ जल निकला। अध्ययन में पता चला कि हरियाणा व राजस्थान में करीब 200 स्थलों पर सरस्वती के पानी के निशान हैं। डीग में एक बार फिर सरस्वती के नए प्रमाण मिलने से इसके ऋग्वैदिक अस्तित्व को प्रामाणिकता मिली है।

(लेखक स्वतंत्र पत्रकार हैं, ये उनके अपने विचार हैं।)

लेख पर अपनी प्रतिक्रिया edit@haribhoomi.com पर दे सकते हैं।

पाखंड और विज्ञान
सोनम लववंशी

दो विरोधाभासी ध्रुवों पर खड़ा दिखाई दे रहा हमारा समाज

हम 21वीं सदी में विज्ञान, तकनीक, शिक्षा और वैश्विक उपलब्धियों के नए कीर्तिमान गढ़ते जा रहे हैं। मंगल तक मानव ने कदम बढ़ा दिए हैं, आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस और जेनेटिक इंजीनियरिंग जैसी क्रांतिकारी खोजें मानवीय सभ्यता के विकास की मिसाल बन चुकी हैं। लेकिन इसी विज्ञान युग में जब यह खबर आती है कि एक गांव में डायन के शक में पांच लोगों को मार डाला गया, या किसी युवक की बलि तांत्रिक अनुष्ठान में दी गई, तो सवाल खड़ा होता है कि क्या हम वाकई 21वीं सदी में जी रहे हैं? भारत आज भी दो विरोधाभासी ध्रुवों पर खड़ा दिखाई देता है। एक ओर तकनीकी दक्षता का वैश्विक दावा, दूसरी ओर सामाजिक चेतना का अंधकार। इन खबरों ने यह साफ कर दिया है कि अंधविश्वास की जड़ें कितनी गहरी हैं जिसे केवल कानून या शिक्षा से उखाड़ पाना कठिन है। विडंबना यह है कि पढ़ा-लिखा तबका भी अंधविश्वास के दलदल में लिथड़ा हुआ है। विज्ञान को 'बेबुनियाद' और 'धर्म विरोधी' कहने वाले लोग आज भी जादू-टोने, तंत्र-मंत्र, ग्रह-नक्षत्रों और बाबाओं के पास समाधान खोजते नजर आते हैं। यह कोई नई बात नहीं कि अंधविश्वास भारत में केवल ग्रामीण या अशिक्षित क्षेत्रों तक सीमित रहा है। शहरी और शिक्षित समाज भी इस मानसिक गुलामी से मुक्त नहीं है। टीवी चैनलों पर प्रसारित होने वाले 'भूत-प्रेत' और 'तांत्रिक' धारावाहिकों से लेकर बड़े-बड़े बाबाओं के विशाल साम्राज्य तक, सब इस प्रवृत्ति को खाद-पानी दे रहे हैं। अनुयायी यह मानते हैं कि उनके बाबा के पास ऐसी 'अलौकिक शक्तियां' हैं जो उनके हर संकट को दूर कर सकती हैं, जबकि सच यह है कि बाबा स्वयं अपने संकट तक नहीं दूर कर पाते। यदि उनके पास ऐसी शक्तियां होतीं तो वे वर्षों तक जेल में न होते, या अपने 'चमत्कारों' से वहां से बाहर निकल आते। बीते दिनों मध्यप्रदेश के एक शांत से दिखने वाले गांव में एक युवक का सिर एक चबूतरे पर रखा मिला। धड़ थोड़ी दूरी पर पड़ी थी। पुलिस पहुंची, जांच की, और पाया कि वहां तांत्रिक क्रियाओं में प्रयुक्त सामग्री बिखरी पड़ी थी। वहां मौजूद हर वस्तु चीख-चीख कर कह रही थी कि यह हत्या नहीं, नरबलि थी। इक्कीसवीं सदी के भारत में नरबलि! कल्पना कीजिए उस मां की जो बेटे के लिए रात भर प्रतीक्षा कर रही होगी। कल्पना कीजिए उस बहन की जो राखी का धागा लिए अपने भाई की कलाई ढूंढ रही होगी। यह आज के भारत की वह चुभती हुई सच्चाई है जिसे देखकर रूह भी कांप जाती हैं। नेशनल क्राइम रिकॉर्ड ब्यूरो के आंकड़े बताते हैं कि 2000 से 2021 के बीच करीब 3000 से अधिक हत्याएं डायन के शक में कर दी गईं। इनमें अकेले झारखंड में 593 मामले दर्ज हुए। मध्यप्रदेश, ओडिशा, छत्तीसगढ़, बिहार और असम, इन सभी राज्यों में हर साल दर्जनों महिलाओं को समाज की क्रूरता निगल जाती है, क्योंकि उन्होंने विरोध किया, संपत्ति रखी, या फिर बस इसलिए क्योंकि वे अकेली थीं। हर बार एक जैसी कहानी गांव में कोई बीमार हुआ, फसल नष्ट हुई, या किसी की मौत हो गई। और कोई 'बुजुर्ग' पुरुष बोल उठा, "यह सब उसकी वजह से हुआ है।" फिर क्या भीड़ ने तय कर लिया कि वह डायन है। उसे घसीटा गया, पीटा गया, सिर मुंडवा दिया गया, नंगा किया गया, पत्थरों से मारा गया। ऐसा नहीं है कि सरकार ने इन घटनाओं के खिलाफ कदम नहीं उठाए। कानून बने। झारखंड में 'डायन प्रथा उन्मूलन अधिनियम', ओडिशा में 'द ओडिशा प्रिवेंशन ऑफ विच-हंटिंग एक्ट', असम में भी 2015 में एक कठोर कानून पारित हुआ। लेकिन क्या कानून उस औरत को बचा पाएगा जिसे गांव वालों ने अपने घर से जिंदा खींच लिया था? क्या कानून उस बच्चे की जान लौटा पाएगा जिसे बलि की बेदी चढ़ा दिया गया? 2010 में महाराष्ट्र के अंधश्रद्धा निर्मूलन समिति के संस्थापक डॉ. नरेंद्र दाभोलकर ने लिखा था "अंधविश्वास सिर्फ अज्ञानता नहीं, यह हिंसा है।" और वे खुद इसी अंधविश्वास के खिलाफ आवाज उठाने की सजा के रूप में 2013 में पुणे की सड़क पर गोली से छलनी कर दिए गए। भारत का भविष्य इस पर निर्भर करता है कि हम इस पाखंड से कब उबरेंगे। हमें तय करना होगा कि क्या हम भविष्य को तर्क और संवेदना की राह पर ले जाएंगे, या उसे पाखंड और क्रूरता की गुफा में धकेल देंगे? यह वही भारत है, जहां विज्ञान का जन्म हुआ, जहां गणना के सूत्र बने, जहां शून्य का आविष्कार हुआ, जहां आकाश के रहस्यों को ऋषियों ने अपनी खुली आंखों से पढ़ा। लेकिन आज इसी धरती पर तंत्र-मंत्र, झाड़-फूंक, बलि, और अंधविश्वास के नाम पर इंसानियत का गला घोंटा जा रहा है। तो ऐसे में हमें और हमारे समाज को सामूहिक रूप से शर्मिंदगी महसूस करने की आवश्यकता है।

(लेखिका शोधार्थी हैं, ये उनके अपने विचार हैं।)

कुसंगति त्यागे, धर्मबुद्धि जागे

संकलित
दर्शन

आम और नीम दोनों की मूल जमीन में एकत्रित होने से नीम के संसर्ग में आम भी नीमपन को प्राप्त करता है। अर्थात दुर्जन की संगत से प्रायः सज्जन भी दुर्जन हो जाता है। इस बात पर यदि थोड़ा विचार किया जाए तो प्रश्न यह उठता है कि दुर्जन का प्रभाव ही क्यों पड़ता है? सज्जन का प्रभाव क्यों नहीं पड़ता। आम भी कड़वा क्यों होता है? नीम मीठा क्यों होता नहीं ? इसके पीछे यही कारण है कि सज्जन का हृदय बहुत कोमल होता है, जबकि दुर्जन कठोर हृदय का होता है। सज्जन तो खरबूजे की भांति होता है और दुर्जन चाकू की भांति। चाकू चाहे खरबूजे पर पड़े या खरबूजा चाकू के ऊपर, कटना तो खरबूजे को ही पड़ता है इसलिए सज्जन को सदैव सजग होकर रहना चाहिए। मनुष्य का अहित जितना दुश्मन नहीं करता उतना उसका अविवेक कर बैठता है। महान उपन्यासकार बाबू बंकिमचन्द्र ने एक जगह लिखा है कि मनुष्य का विशेष अहित उनके स्नेहीजन ही कर सकते है। विवेकहीन माता-पिता धर्म भावना वाली संतान को धर्म से विमुख करके उसे विषय वासना के गर्त में डाल सकते हैं। वर्तमान युग में देखा जा रहा है कि माता पिता अपनी संतान को धनवान बनाने की भावना रखते हैं मगर धर्मवान बनाने की ओर उनका ध्यान नहीं जाता है। वे अपनी संतान को सुसंस्कारित करने की ओर और ध्यान नहीं दे पाते। जिसमें स्वयं संस्कारो का अभाव होता है ,वे भला दूसरों को संस्कारित कैसे कर सकते हैं।

पति-पत्नी के बीच अविश्वास नहीं होना चाहिए

संकलित
प्रेरणा

शिव जी और सती को रास्ते में श्रीराम दिखाई दिए। श्रीराम सीता के वियोग में रो रहे थे। शिव जी ने श्रीराम को दूर से ही प्रणाम किया और देवी सती से कहा कि तुम भी भगवान को प्रणाम करो। सती ने सोचा कि जो व्यक्ति रो रहा है, वह भगवान कैसे हो सकता है। शिव जी ने समझाया कि आप श्रीराम पर संदेह न करें, वे भगवान ही हैं। शिव जी तो वहां से चले गए, लेकिन देवी सती ने सोचा कि वे श्रीराम की परीक्षा लेंगी। ऐसा सोचकर वे सीता का रूप धारण करके श्रीराम के सामने पहुंच गईं। श्रीराम ने उन्हें पहचान लिया, प्रणाम किया और पूछा कि देवी आप अकेली आई हैं, भगवान शिव कहां हैं। श्रीराम की बात सुनकर सती लज्जित हो गईं और चुपचाप शिव जी के पास लौट आईं। इसके बाद शिव जी ने देवी सती का मानसिक त्याग कर दिया था। इस घटना के कुछ समय बाद देवी सती के पिता ने एक यज्ञ का आयोजन किया था। यज्ञ में दक्ष ने शिव-सती को छोड़कर सभी देवी-देवताओं को बुलाया था। जब ये बात सती को मालूम हुई तो उन्होंने शिव जी से पिता के यहां जाने की अनुमति मांगी। शिव जी ने सती को समझाया कि हमें ऐसे आयोजन में बिना बुलाए नहीं जाना चाहिए, लेकिन सती ने शिव जी की बात नहीं मानी और पिता के यहां यज्ञ में चली गईं। सती जब यज्ञ स्थल पर पहुंची तो दक्ष ने सती के सामने ही शिव जी का अपमान करना शुरू कर दिया। सती ये सहन नहीं सकीं और यज्ञ कुंड में कूदकर देह त्याग दी।

अंतर्मन

आज की पाती

नशे से निपटने के लिए कारगर योजना बने

कौन परिवार चाहेगा कि हमारा बच्चा नशे से ग्रसित हो और नशा बेचने जैसी गतिविधियों में संलिप्त हो। तो हम यह कैसे मान सकते हैं कि उनके परिवारों को इस मानसिक प्रताड़ना के साथ-साथ उनको सरकारी योजनाओं से वंचित कर देंगे और साथ में उनका सामाजिक बहिष्कार कर देंगे। हर सिक्के के दो पहलू होते हैं। हम यह भी नहीं कह सकते है कि सभी परिवार इसमें संलिप्त नहीं हैं, परंतु इसकी प्रतिशतता बहुत कम है। कुछ संस्थाएं अपनी राजनीतिक रोटियां सेंकने के चक्कर में आए दिन समाचारपत्रों में खबर लगवा देती हैं कि यदि कोई भी ऐसे कार्य में संलिप्त पाया जाता है तो हम ऐसे परिवारों के सदस्यों को सभी सुविधाओं से वंचित कर देंगे। क्या हमने सोचा है कि जो परिवार पहले ही अपने परिवार के सदस्य के बर्बाद होने का दंश झेल रहा हो, वो सामाजिक बहिष्कार को भी झेल पाएगा?

- मदन कश्यप, बेमेतरा

करंट अफेयर

पाकिस्तान में इमरान खान की रिहाई के लिए आंदोलन शुरू

पाकिस्तान तहरीक-ए-इंसाफ पार्टी ने जेल में बंद पूर्व प्रधानमंत्री की रिहाई की मांग को लेकर 'इमरान खान को आजाद करो' आंदोलन शुरू किया है। पार्टी ने रविवार को यह जानकारी दी। हालांकि, पुलिस ने अनौपचारिक रूप से शुरू किए गए इस आंदोलन में पार्टी कार्यकर्ताओं को शामिल होने से रोकने के लिए कई गिरफ्तारियां की हैं। आंदोलन की यह अनौपचारिक शुरुआत पार्टी की पूर्व घोषित तिथि पांच अगस्त से एक महीने से भी कम समय पहले हुई है। खैबर पख्तूनख्वा के मुख्यमंत्री और पार्टी के प्रमुख नेता अली अमीन गंडापुर पार्टी नेताओं के साथ शनिवार देर रात लाहौर पहुंचे और खान को रिहा करने के लिए आंदोलन शुरू करने की घोषणा की।

क्रिकेटर से राजनीतिक नेता बने 72 वर्षीय इमरान खान अगस्त 2023 से जेल में हैं, क्योंकि उन पर कई मामलों में मुकदमा दर्ज किया गया है। पूर्व प्रधानमंत्री की पार्टी पांच अगस्त से देश भर में एक बड़े अभियान की शुरुआत करने की तैयारी कर रही है ताकि शहबाज शरीफ सरकार और सेना पर खान को रिहा करने का दबाव बनाया जा सके। अली अमीन और पार्टी के अन्य प्रमुख नेता अपने विरोध अभियान को अंतिम रूप देने के लिए लाहौर के रायविंड इलाके में एक फार्महाउस में डेरा डाले हुए हैं।

ऑफ बीट

एआई वाकई उत्पादकता बढ़ाता है? सबूत अस्पष्ट

सरल शब्दों में कहें तो उत्पादकता यह है कि हम एक निश्चित मात्रा में सामग्रियों से कितना उत्पादन कर सकते हैं। यह इसलिए महत्वपूर्ण है कि उच्च उत्पादकता

आमतौर पर उच्च जीवन स्तर में परिवर्तित होती है। पिछले तीन दशकों में उत्पादकता वृद्धि ऑस्ट्रेलिया की आय वृद्धि का 80 प्रतिशत हिस्सा रही है। उत्पादकता को व्यक्तिगत, संगठनात्मक या राष्ट्रीय स्तर पर देखा जा सकता है। आपकी व्यक्तिगत उत्पादकता इस बात पर निर्भर करती है कि आप कार्यों को पूरा करने के लिए अपने समय और संसाधनों का कितनी कुशलता से प्रबंधन करते हैं। आप एक घंटे में कितने ईमेल का जवाब दे सकते हैं? आप एक दिन में कितने उत्पादों में खराबी की जांच कर सकते हैं? संगठनात्मक उत्पादकता यह है कि कोई संगठन अपने लक्ष्यों को कितनी अच्छी तरह हासिल करता है। उदाहरण के लिए, किसी शोध संगठन में कितने उच्च-गुणवत्ता वाले शोध पत्र तैयार किए जाते हैं? राष्ट्रीय उत्पादकता किसी राष्ट्र की आर्थिक दक्षता है, जिसे प्राय: प्रति घंटे काम किए गए सकल घरेलू उत्पाद के रूप में मापा जाता है। यह प्रभावी रूप से अन्य रूपों का एक समूह है। लेकिन यह पता लगाना बेहद मुश्किल है कि व्यक्तिगत या संगठनात्मक उत्पादकता में बदलाव प्रति घंटे काम करने पर राष्ट्रीय सकल घरेलू उत्पाद में कैसे परिवर्तित होता है।

X ट्रेंड f

योजनाओं का असर

यह हमारी सरकार की योजनाओं का असर ही है कि आज हर वर्ग के लोगों के पास आय का जरिया है और इसी के परिणामस्वरूप बीते 10 वर्षों में 25 करोड़ लोग गरीबी से बाहर निकले हैं।

-नरेंद्र मोदी, प्रधानमंत्री

नीमराणा का विकास

आज बावड़ी के पास नीमराणा से हरियाणा सीमा तक बनाई जाने वाली सड़क का शिलान्यास कार्यक्रम विधिवत तरीके से नारियल फोड़कर किया। बिजली, पानी और सड़क की बुनियादी सुविधाएं सुनिश्चित कर हम नीमराणा के विकास को गति देने के लिए निरंतर प्रयासरत है।

-भूपेन्द्र यादव, केंद्रीय पर्यावरण मंत्री

अभिनेता राव को श्रद्धांजलि

पद्मश्री पुरस्कार विजेता और अपनी अभिनय प्रतिभा से दर्शकों को मंत्रमुग्ध करने वाले दिग्गज तेलुगु अभिनेता कोटा श्रीनिवास राव को मेरी श्रद्धांजलि। मैं उनके परिवार के प्रति अपनी गहरी संवेदना व्यक्त करता हूं।

-एन चंद्रबाबू नायडू, सीएम, आंध्र प्रदेश

बारिश को गंभीरता से लें

सरकार से आग्रह है कि वो बारिश को गंभीरता से ले। सही शासनिक-प्रशासनिक प्रयासों से हादसों को टाला जा सकता है। ये किसी की जिंदगी का सवाल भी हो सकता है। सरकार की बदइंतजामी का खामियाजा जनता को भुगतना पड़ रहा है।

-अखिलेश यादव, सांसद, सपा

अपने विचार

हरिभूमि कार्यालय

टिकरापारा, रायपुर में पत्र के माध्यम से या फैक्स : 0771-4242222, 23 पर या सीधे मेल से hbcgpati@gmail.com पर भेज सकते हैं।

हिन्दुस्तान
1936

शुभांशु से हासिल

अंतरराष्ट्रीय अंतरिक्ष केंद्र में शुभांशु शुक्ला की उपस्थिति और इसकी चर्चा सुखद है। अगर मौसम और तकनीकी प्रबंध योजना के अनुरूप रहे, तो भारतीय अंतरिक्ष यात्री शुभांशु शुक्ला पूरी टीम सहित आज शाम (14 जुलाई) धरती के लिए चल पड़ेंगे। भारतीय अंतरिक्ष विज्ञान के लिए यह एक ऐसी उपलब्धि है, जिसकी अनुगूंज कभी खत्म नहीं होगी। हालांकि, एक्सिओम-4 मिशन महज 14 दिनों के लिए प्रस्तावित था, लेकिन तकनीकी वजहों से इसे दो-तीन दिन लंबा खींचना पड़ा है। मगर ऐसी देरी अंतरिक्ष केंद्र के यात्रियों के लिए नई नहीं है। भारतीय मूल की अंतरिक्ष यात्री सुनीता विलियम्स तो इसका सबसे ताजा उदाहरण हैं, जो करीब नौ महीने के बाद धरती पर लौट सकीं, जबकि उनकी यात्रा सिर्फ एक हफ्ते के लिए तय की गई थी।

एक्सिओम-4 मिशन अपने प्रयोगों के लिए खास तौर से जाना जाएगा। पूरे अभियान के दौरान जैव चिकित्सा विज्ञान, एडवांस मैटिरियल, तंत्रिका विज्ञान, कृषि और अंतरिक्ष प्रौद्योगिकी से जुड़े 60 से भी अधिक प्रयोग किए गए हैं। यही वजह है कि प्रयोगों की संख्या के लिहाज से इसका नाम उन निजी अभियानों में शीर्ष पर पहुंच गया है, जो अंतरिक्ष अन्वेषण के लिए अब तक हुए हैं। इन प्रयोगों से अंतरिक्ष अन्वेषण को नई दिशा मिलने की उम्मीद है। साथ ही, पृथ्वी पर इंसानी जीवन को भी फायदा मिलेगा, क्योंकि मधुमेह प्रबंधन, कैंसर के नए उपचार और मानव स्वास्थ्य की निगरानी जैसे क्षेत्रों में नई-नई राह खुलने के कयास लगाए जा रहे हैं। इनमें भी जिन प्रयोगों को शुभांशु ने अंजाम दिए हैं, उनको खास माना जा रहा है। जैसे, 5 जुलाई को उन्होंने अपने सहयोगी यात्रियों के साथ सूक्ष्म गुरुत्वाकर्षण की स्थिति में हड्डियों की प्रतिक्रिया का अध्ययन किया है। यह एक ऐसा प्रयोग है, जिससे पृथ्वी पर ऑस्टियोपोरोसिस के बेहतर इलाज की संभावना बन सकती है। ध्यान रहे, ऑस्टियोपोरोसिस ऐसी बीमारी है, जिसमें इंसानों की हड्डियां इस हद तक कमजोर हो जाती हैं कि उनके आसानी से टूटने का खतरा बढ़ जाता है। माना जाता है कि दुनिया भर में तकरीबन 20 करोड़ लोग इस गंभीर बीमारी से पीड़ित हैं, जिनमें भारतीयों की संख्या छह करोड़ से अधिक है।

एक्सिओम-4 मिशन अपने खास प्रयोगों के लिए हमेशा जाना जाएगा। जैव चिकित्सा विज्ञान से लेकर कृषि तक 60 से अधिक आधुनिक प्रयोग और अध्ययन किए गए हैं।

इसी तरह, अपनी उड़ान के 10वें दिन शुभांशु ने अंतरराष्ट्रीय अंतरिक्ष स्टेशन में विकिरण से होने वाले खतरों से संबंधित एक प्रयोग में हिस्सा लिया। यह लंबी अवधि के अंतरिक्ष अभियानों में अंतरिक्ष यात्रियों की बेहतर सुरक्षा सुनिश्चित कर सकता है। उन्होंने सूक्ष्म शैवाल को लेकर भी अध्ययन किए हैं। इससे पृथ्वी की कक्षा से बाहर 'डीप स्पेस' मिशनों के लिए भोजन, ऑक्सीजन और जैव ईंधन प्रदान करने में मदद मिल सकती है। मुश्किल परिस्थितियों में भी उबरने की इन शैवालों की क्षमता उनको पृथ्वी से परे जीवन को बनाए रखने के लिए एक आशाजनक संसाधन बनाती है। अंतरिक्ष में दीर्घकालिक कृषि को संभव बनाने के साथ ही, ऐसे प्रयोगों से पौधों की आनुवंशिक संरचनाओं को भी समझने में मदद मिलेगी। जाहिर है, अंतरिक्ष विज्ञान की दुनिया इन प्रयोगों के आधार पर आगे बढ़ना चाहेगी और इस मिशन के अनुभवों को सहेजना चाहेगी। भारत के लिहाज से भी यह मानव अंतरिक्ष अभियान की एक ठोस शुरुआत है। लिहाजा, उम्मीद यही है कि इसरो 2027 के शुरुआती महीनों में अपने गगनयान अभियान को पूरा कर लेगा। बीते कुछ वर्षों में जिस तरह से इस संस्थान ने अपने खाते में उपलब्धियां बटोरी हैं, उसे देखते हुए यह उम्मीद गलत नहीं है।

हिन्दुस्तान Hindustan | 75 साल पहले 14 जुलाई, 1950

कोरिया और भारत

कोरिया के प्रश्न पर विचार करने के लिए भारतीय संसद का एक विशेष अधिवेशन 31 जुलाई से होगा। यह अधिवेशन एक पखवाड़े तक चलेगा। स्वभावतः इसमें कुछ आवश्यक विधियों के निर्माण और पुनर्निर्माण पर भी विचार किया जायेगा, किन्तु मुख्य वाद-विवाद भारत की कोरिया सम्बन्धी नीति पर होगा, यह स्पष्ट है। संयुक्त राष्ट्रीय सुरक्षा परिषद् के कोरिया सम्बन्धी प्रस्ताव को स्वीकार कर भारत सरकार ने अपने को प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से युद्ध में जो भागीदार बना लिया है, उससे देश के कुछ व्यक्तियों को हो-हल्ला मचाने का अवसर मिल गया है और चूंकि निकट भविष्य में ही राष्ट्र के आम चुनाव होने वाले हैं, अवसरवादियों को भारत सरकार पर कीच उछालने का एक बहाना पाकर बड़ी प्रसन्नता हो रही है।

नेहरू-मंत्रिमंडल के कोरिया सम्बन्धी निर्णय पर विचार करने से पूर्व दो-तीन अपरिहार्य तथ्यों को दृष्टि में रखना आवश्यक है। सबसे पहली बात तो यह है कि भारत ने आक्रमणकारियों का समर्थन नहीं किया, बल्कि सदा विरोध ही किया। पाठकों को स्मरण होगा कि द्वितीय महासमर के छिड़ने पर, ब्रिटिश सरकार के साथ जीवन-मरण के संघर्ष में रत रहने वाले भारत ने एक स्वर से आक्रमणकारी हिटलर की निन्दा की थी। स्वाभाविक बात तो यह थी कि ब्रिटिश-विरोधी होने के कारण हिटलर को भारत अपना मित्र मानता, किन्तु हिटलर ने पोलैंड पर आक्रमण करके विश्व-शांति को भंग किया था, जो राष्ट्रपिता महात्मा गांधी की आंखों में एक अक्षम्य अपराध था। अतः राष्ट्र के इस बहुमत सिद्धांत को दृष्टि में रखते हुए यह ठीक ही था कि भारत सरकार ने आक्रमणकारी उत्तरी कोरिया को समर्थन का पात्र नहीं समझा।

दूसरा आवश्यक तथ्य यह है कि भारत न केवल संयुक्त राष्ट्र का बल्कि उसकी उस सुरक्षा परिषद् का भी सदस्य है, जो अन्तर्राष्ट्रीय राजनीतिक संघर्षों पर विचार कर सदस्य राष्ट्रों के लिए एक निश्चित नीति और कार्यक्रम निर्धारित करती है। अपेक्षा तो यही की जाती है कि जिस सुरक्षा परिषद् में संसार के अधिकांश प्रमुख राष्ट्रों का प्रतिनिधित्व है, उसके निर्णय विश्व के लिए मंगलकारी ही होंगे। इस दृष्टिकोण से भी सुरक्षा-परिषद् के कोरिया-सम्बन्धी प्रस्ताव को स्वीकार करना भारत के लिए उचित ही समझा जाना चाहिए।

हमेशा गलत नहीं होता कर्ज लेना

राजेश शुक्ला | आर्थिक विशेषज्ञ

कुछ परिवार कर्ज का उपयोग आगे बढ़ने के लिए मदद के रूप में करते हैं, तो कुछ इसे अंतिम उपाय के तौर पर। इस बात को ध्यान में रखकर ही नीतियां बनानी चाहिए।

जैसे-जैसे भारत अपने पांच ट्रिलियन डॉलर के आर्थिक लक्ष्य की ओर बढ़ रहा है, घरेलू कर्ज (किसी परिवार पर कुल कर्ज) को लेकर होने वाली चर्चा चिंता में बदलने लगी है। बढ़ते कर्ज को आमतौर पर खतरे की घंटी माना जाता है, जो वाजिब भी है, मगर ऐसा सोचते हुए हम एक महत्वपूर्ण पहलू को नजरंदाज कर देते हैं।

दरअसल, कई भारतीय परिवारों के लिए कर्ज महज बोझ नहीं, बल्कि निवेश का एक सोचा-समझा साधन है। उनके लिए यह कमजोर सार्वजनिक व्यवस्था से निपटने का तरीका, तो कभी-कभी ऊपर चढ़ने की सीढ़ी भी है। 'प्राइस' की 'आईसीई 360 डिग्री' रिसर्च से मिली जानकारी से पता चलता है कि भारत के 33.1 करोड़ परिवारों में से लगभग 30 फीसदी पर कर्ज है, मगर अलग-अलग कामकाजी समूहों में खूब भिन्नता है। उधार लेने की प्रकृति, उसका उद्देश्य और उसके स्रोत का पता चलने से भारत में घरेलू कर्ज को लेकर काफी गहन सूचनाएं सामने आई हैं।

उदाहरण के लिए, जिन परिवारों का कम से कम एक सदस्य आजीविका के लिए खेती-बाड़ी पर निर्भर है, यानी स्व-नियोजित ऐसे कृषि परिवारों पर सबसे ज्यादा 38 प्रतिशत कर्ज का बोझ है। इसके बाद गैर-कृषि कामगारों और स्व-रोजगार से जुड़े परिवारों (दोनों पर 28-29 प्रतिशत) का स्थान आता है। यह न केवल उनकी कमजोर माली हालत, बल्कि सक्रिय आर्थिक भागीदारी को भी दर्शाता है, क्योंकि कृषि क्षेत्र में 57 प्रतिशत कर्जदारों ने कृषि-सामग्री और पशुधन जैसी उत्पादक जरूरतों के लिए कर्ज लेने की बात कही है। गैर-कृषि क्षेत्र में भी 31 फीसदी कर्जदार अपने कारोबार को बढ़ाने के लिए कर्ज लेते हैं। साफ है, ऐसे कर्ज आजीविका में निवेश हैं, न कि संकट के संकेत।

फिर भी, कर्ज की यह तस्वीर पूरी तरह से आशावादी नहीं है। स्व-नियोजित कृषि परिवारों के लिए ऋण-आय अनुपात (कर्ज चुकाने में मासिक आमदनी का खर्च होने वाला हिस्सा) 16 प्रतिशत व स्व-नियोजित गैर-कृषक परिवारों के लिए 15 प्रतिशत है, जबकि वेतनभोगी परिवारों के लिए यह 10 फीसदी है। पिछले एक दशक में स्व-नियोजित गैर-कृषक परिवारों के कुल घरेलू कर्ज में 12 प्रतिशत की वृद्धि हुई है, जो तमाम समूहों में सबसे तेज उछाल है। यह बढ़ोतरी संकेत है कि इस समूह में उद्यमशीलता से जुड़ी गतिविधियां बढ़ी हैं, मगर साथ ही यह वृद्धि आर्थिक अस्थिरता और बाजार के झटकों से बढ़े खतरे को भी दर्शाती है।

यहां कर्ज का स्रोत भी मायने रखता है। बेशक 52 फीसदी कर्जदार परिवार औपचारिक संस्थाओं से ही कर्ज लेते हैं, लेकिन ऐसी संस्थाओं तक सभी की पहुंच एक जैसी नहीं है। वेतनभोगी और स्व-रोजगार वाले परिवार आमतौर पर औपचारिक ऋण व्यवस्थाओं से जुड़े होते हैं, जबकि श्रमिक परिवार अनौपचारिक कर्जदारों पर आज भी बुरी तरह से निर्भर हैं। आंकड़ों के मुताबिक, खेतिहर मजदूरी से जुड़ 62 प्रतिशत परिवार ऐसे कर्ज पर निर्भर हैं, तो गैर-कृषि मजदूरों के 58 फीसदी परिवार। ऐसे में, उन्हें भारी ब्याज दरों, लचर शिकायत निवारण और अधिक आर्थिक अनिश्चितता जैसी समस्याओं का सामना करना पड़ता है।

इन मुश्किलों को परिवारों के कर्ज लेने की वजह और जटिल बना देती है। स्व-नियोजित परिवार अक्सर अपनी तरक्की के काम के लिए कर्ज लेते हैं, वहीं श्रमिक परिवार अमूमन जीवित रहने के लिए। कृषि और गैर-कृषि मजदूरों में क्रमशः 24 प्रतिशत और 29 फीसदी लोग स्वास्थ्य कारणों से कर्ज लेते हैं, जबकि 19 प्रतिशत बुनियादी जरूरतें पूरी करने के लिए। यदि इनकी तुलना सुरक्षित वेतनभोगी परिवारों से करें, तो ऐसे 24 फीसदी परिवार स्वास्थ्य मद में खर्च के लिए कर्ज लेते हैं, जबकि 15 फीसदी अपने बच्चों की बेहतर पढ़ाई-लिखाई के लिए। यह प्रवृत्ति बताती है, एक ही साधन (कर्ज) परिवारों की आर्थिक हैसियत के हिसाब से अलग-अलग कार्य करता है।

संक्षेप में कहें, तो भारत के घरेलू कर्ज की तस्वीर काफी अस्त-व्यस्त और खासा असमान है, मगर यह आकांक्षा और आत्मनिर्भरता की एक अंतहीन भावना को भी दर्शाती है। इसको ध्यान में रखकर ही नीतियां बननी चाहिए, क्योंकि कुछ परिवार कर्ज का उपयोग विकास के लिए मदद लेने के तौर पर करते हैं, तो कुछ अंतिम उपाय के रूप में। शुरुआत कृषि क्षेत्र से होनी चाहिए, जहां औपचारिक कर्ज की पहुंच तुलनात्मक रूप से अधिक है, लेकिन कर्ज का बढ़ता बोझ बताता है कि केवल पहुंच ही पर्याप्त नहीं है। यहां कर्जमाफी जैसे उपायों के बजाय मूल्य शृंखला में सुधार जैसे कदम उठाए जाने चाहिए। फसल बीमा कवरेज का विस्तार और किसान क्रेडिट कार्ड जैसी व्यवस्था में सुधार भी जरूरी हैं। साथ ही, स्थायी प्रभाव के लिए कृषि बाजारों व कर्ज-नीतियों में संरचनात्मक सुधार भी होने चाहिए।

हमें कर्ज और स्वास्थ्य संबंधी खर्चों के गहरे अंतरसंबंधों को देखते हुए कर्ज-नीति और सामाजिक सुरक्षा के बीच कहीं बेहतर सामंजस्य बनाना होगा। इलाज संबंधी आपात स्थितियों के कारण कर्ज लेने की प्रवृत्ति न सिर्फ गरीबों में, बल्कि सभी कामकाजी वर्गों में दिखती है। लिहाजा, आयुष्मान भारत जैसी सरकारी स्वास्थ्य बीमा योजनाओं का विस्तार और जन-धन खातों को सब्सिडी वाले या आपात चिकित्सा के समय कर्ज उपलब्ध कराने वाले उत्पादों से जोड़ने से मुश्किल घड़ी में कर्ज लेने की जरूरत घट सकती है।

स्व-रोजगार वाले परिवारों, खासकर जो कृषि-कर्म से बाहर हैं, कर्ज उद्यमशीलता बढ़ाने का काम करता है। मुद्रा जैसे कार्यक्रमों ने उनको मदद पहुंचाई है, पर अधिक अनुकूल आर्थिक उत्पाद इन परिवारों को स्थायी रूप से विकसित होने में मदद कर सकते हैं। पूंजी के लिए लचीले कर्ज और शहरी सूक्ष्म उद्योगों के लिए डिजिटल कर्ज जैसी व्यवस्थाएं इसमें कारगर साबित हो सकती हैं। ऐसे निवेश न केवल परिवारों की आमदनी बढ़ा सकेंगे, बल्कि रोजगार-सृजन और स्थानीय स्तर पर आर्थिक गतिशीलता भी बढ़ाएंगे।

श्रमिक परिवारों तक औपचारिक कर्ज को पहुंचाना बहुत जरूरी है। अपने ग्राहक को जानें (केवाईसी) मानदंडों को आसान बनाकर, छोटी वित्तीय संस्थाओं का विस्तार करके और आसान कर्ज मुहैया कराकर इन परिवारों को औपचारिक कर्ज वाली व्यवस्था से जोड़ा जा सकता है। लोगों में वित्तीय साक्षरता बढ़ाने के प्रयास भी किए जाने चाहिए, ताकि वे कहीं अधिक सुरक्षित और सशक्त बन सकें।

साफ है, भारत में घरेलू कर्ज की कहानी नई नहीं है। यह जरूरत, महत्वाकांक्षाओं, जोखिम और लचीलेपन की मिली-जुली दास्तां है। अगर हमारी नीतियां इस जटिलता को संजीदगी के साथ समझें, तो भारत में घरेलू कर्ज आर्थिक बदलाव का जरिया बन सकता है।

(ये लेखक के अपने विचार हैं)

सैटेलाइट की सहायता से सीमाओं पर पहरेदारी

निरंकार सिंह | पूर्व सहायक संपादक, हिंदी विश्वकोश

जंग अब सिर्फ सीमाओं पर नहीं लड़ी जाती। अब यह समुद्र, धरती, आसमान से लेकर अंतरिक्ष तक से लड़ी जा रही है। इसलिए आने वाला समय अंतरिक्ष में भारत की ताकत दिखाने वाला है। भारत ने 'ऑपरेशन सिंदूर' के दौरान यह साफ कर दिया कि दुश्मन की हर हरकत पर उसकी नजर है। इस लिहाज से सरकार द्वारा साल 2029 तक 52 विशेष सुरक्षा सैटेलाइट अंतरिक्ष में भेजने का फैसला बेहद अहम है, जो पाकिस्तान-चीन सीमा पर लगातार नजर रखेंगे।

भारत ने अपनी अंतरिक्ष क्षमता को तेजी से विकसित किया है। इसरो ने पिछले कुछ सालों में शानदार काम करके दिखाया है। 27 मार्च, 2019 को भारत ने 'मिशन शक्ति' के तहत एक लो-ऑर्बिट सैटेलाइट को एंटी-सैटेलाइट मिसाइल से सफलतापूर्वक नष्ट किया। इस कदम ने भारत के अंतरिक्ष सुरक्षा क्षमता का एक बड़ा उदाहरण पेश किया है। अब इस नई योजना से देश के हवाई सुरक्षा तंत्र एस-400 व आकाशतीर को और बेहतर बनाने में मदद मिलेगी। ऑपरेशन सिंदूर में ऐसे सैटेलाइट्स की खास भूमिका रही है। इसरो के सैटेलाइट पाकिस्तानी आतंकी अड्डों और सैन्य ठिकानों की सटीक सूचना दे रहा था। भारतीय सेना की आंख बने इसरो से पाकिस्तान में आतंकी ठिकानों पर अचूक हमला करने में बहुत मदद मिली। इसरो के सैटेलाइट नेटवर्क से मिले इनपुट के जरिये सेना ने पाकिस्तान के सैन्य रडार सिस्टम को नष्ट करने और उसके ड्रोन व मिसाइल हमलों को नाकाम करने में सफलता हासिल की।

युद्धों में हवाई क्षेत्र की निर्णायक भूमिका को देखते हुए सरकार द्वारा अंतरिक्ष में 52 सैन्य सैटेलाइट भेजने का फैसला काफी अहम है।

इन नए 52 सैटेलाइट में से 21 को इसरो बनाएगा और बाकी 31 तीन निजी कंपनियां विकसित करेंगी। इसकी मंजूरी पिछले साल अक्तूबर में ही मिल चुकी थी। इस पूरी परियोजना की लागत करीब 26,968 करोड़ रुपये है। सबसे पहला सैटेलाइट अगले वर्ष अप्रैल तक लॉन्च किया जाएगा। बाकी सभी 51 सैटेलाइट को 2029 के अंत से पहले अंतरिक्ष में पहुंचा दिया जाएगा। ये सभी सैटेलाइट धरती की निचली कक्षा और भूस्थिर कक्षा (जियोस्टेशनरी ऑर्बिट) में लगाए जाएंगे, ताकि दुश्मन के इलाकों पर 24 घंटे कड़ी नजर रखी जा सके। भारतीय वायु सेना तीन खास हवाई पट्टियां भी तैयार कर रही है, जिनको 'छद्म-उपग्रह' कहा जाता है। दरअसल, ये पायलट रहित विमान होंगे, जो बहुत ऊंचाई से लगातार निगरानी कर सकेंगे। निजी कंपनियों को निर्देश दिए गए हैं कि वे सैटेलाइटों को बनाने का काम और तेज करें। सरकार चाहती है कि ये सभी सैटेलाइट तय समय से पहले लॉन्च हो जाएं। देश की सुरक्षा और त्वरित कार्रवाई की क्षमता हासिल करने के लिहाज से यह काफी अहम है।

विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी की प्रगति ने अंतरिक्ष को सिर्फ रिसर्च और संचार का माध्यम नहीं रहने दिया, यह एक नया युद्धक्षेत्र बनता जा रहा है। दुनिया के कई देश अंतरिक्ष में जंग की तैयारी कर चुके हैं। वे न केवल वहां अपने सैन्य उपग्रह तैनात कर रहे हैं, बल्कि दुश्मन की सैटेलाइट को नष्ट करने की क्षमता भी हासिल कर चुके हैं। अमेरिका, रूस, चीन और भारत अंतरिक्ष में जंग लड़ने की ताकत रखते हैं। इन देशों ने अपने-अपने सैटेलाइट को नष्ट करके दुनिया को दिखा दिया है कि वे कितने खतरनाक हो सकते हैं। अमेरिका के पास एंटी-सैटेलाइट मिसाइल तकनीक है। उसने 1985 में ही एफ-15 लड़ाकू विमान से मिसाइल दागकर अपने ही सैटेलाइट को नष्ट कर दिया था। उसके पास निगरानी व जासूसी उपग्रहों का जखीरा है।

रूस भी अंतरिक्ष तकनीक में किसी से पीछे नहीं है। सोवियत संघ के समय से ही रूस अंतरिक्ष क्षेत्र में अग्रणी रहा है। 2007 के बाद उसने अपने कई गुप्त मिशन अंतरिक्ष में भेजे हैं और एंटी-सैटेलाइट परीक्षण भी किए हैं। दिसंबर 2021 में तो अमेरिका ने रूस पर यह आरोप लगा दिया था कि उसने अपनी एंटी-सैटेलाइट मिसाइल से एक सैटेलाइट को नष्ट किया, जिसका मलबा अंतरिक्ष में फैल गया। चीन ने अंतरिक्ष में अपनी ताकत का प्रदर्शन 2007 में किया था। तब उसने एंटी-सैटेलाइट मिसाइल से अपने निष्क्रिय मौसम उपग्रह को नष्ट किया था। वर्तमान समय में चीन नियमित रूप से सैन्य सैटेलाइट लॉन्च करता रहता है।

इन देशों के अनुभवों से एक बात साफ है कि हमें अंतरिक्ष से निगरानी में कोई देरी नहीं करनी चाहिए।

(ये लेखक के अपने विचार हैं)

मनसा वाचा कर्मणा

शिव के भक्त को भय कैसा

सावन का महीना व्रत और पूजा का महीना है। इन दिनों कई तरीके से शिव शंकर की पूजा होती है। शिव एक अद्भुत प्रतीक हैं, जिन्हें भारतीयों ने खोजा है। *गीता* में कृष्ण ने कहा है, मैं रुद्रों में शंकर हूं। क्या आशय होगा इसका? शिव विध्वंस के देवता हैं। वह कहते हैं, मृत्यु भी मैं हूं, महाविनाश का सूत्र भी मैं ही हूं।

जीवन के तीन पहलू हैं- उत्पत्ति, स्थिति और विनाश। लेकिन मुश्किल है इसको मानना। जब हम परमात्मा को विनाश की शक्ति समझेंगे, तो हमें बहुत अड़चन होगी, क्योंकि हम सदा ही स्रष्टा के साथ, सृजन के साथ परमात्मा को एक समझते हैं। हमारी समझ में आता है कि परमात्मा ने बनाया, पर मिटाएगा भी परमात्मा, यह हमारी समझ में नहीं आता। हम इसको समझना भी नहीं चाहते। अब जो बनाएगा, वही मिटाएगा भी। और जो बनने की क्रिया होगी, उसके ही विपरीत मिटने की क्रिया भी होगी। बनना और मिटना, सृजन और संहार, एक ही प्रक्रिया के अंग होंगे। समस्त सृजन विनाश को पैदा करेगा, और समस्त विनाश नए सृजन को जन्म देगा।

इसलिए कृष्ण अर्जुन से यह कहते हैं कि विनाश से तुम परेशान और पीड़ित मत हो। मृत्यु भी तुमको भयभीत न करे। तुम मृत्यु में भी मुझे देख सकते हो, क्योंकि विनाश की अंतिम शक्ति भी मैं ही हूं।

अर्जुन के माध्यम से वह हम सबको कह रहे हैं कि मृत्यु से डरना मत, वह जीवन का ही अंग है। सच तो यह है कि मृत्यु को समझे बिना जीवन को समझा ही नहीं जा सकता। वे जीवन के दो छोर हैं: एक तरफ से आना, दूसरी तरफ से जाना। यह संपूर्ण दृष्टि है, क्योंकि भारत में समय वर्तुलाकार है, सीधी रेखा नहीं है। पश्चिम में समय सीधी रेखा है, इसी कारण से वे मानते हैं कि आदमी जन्म के साथ पैदा होता है और मरने के साथ विदा हो जाता है। नहीं, जीवन जन्म और मरण के वर्तुल के पार है। इसीलिए शिव को काम के साथ भी जोड़ा गया है। कामदेव को वे ही भस्म कर सके, अन्य कोई देवता नहीं।

मृत्यु को हम अंत नहीं मानते। मृत्यु को हम केवल एक गहन विश्राम मानते हैं। जैसे दिन भर आप मेहनत करते हैं और रात में सो जाते हैं। भारतीय मन सदा से मानता रहा है कि निद्रा भी एक अल्पकालीन मृत्यु है। दिन भर जागते हैं, थकते हैं, रात में सो जाते हैं। सुबह पुनः ताजा हो जाते हैं, पुनर्जीवित हो जाते हैं। फिर यात्रा पर निकल जाते हैं।

जो आदमी सो न सके, वह जिंदा नहीं रह सकेगा। इसलिए एक तरफ शिव की पूजा करना और दूसरी तरफ मृत्यु से डरना, इसको बंद करें; इससे न तो आप शिव को समझेंगे, और न ही मृत्यु को।

जो आदमी सो न सके, वह जिंदा नहीं रह सकेगा। इसलिए एक तरफ शिव की पूजा करना और दूसरी तरफ मृत्यु से डरना, इसको बंद करें; इससे न तो आप शिव को समझेंगे, और न ही मृत्यु को।

अमृत साधना

धर्मेंद्र प्रधान | केंद्रीय शिक्षा मंत्री

विकसित राष्ट्र की जो वैश्विक परिभाषा है, क्या हमारी भी वही होनी चाहिए या हमें संवाद और परामर्श के माध्यम से अपनी अद्वितीय विरासत, मूल्यों और संस्कृति को ध्यान में रखते हुए समृद्ध राष्ट्र की भारतीय परिभाषा बनानी चाहिए?

व्यवस्था की नाकामी से जलभराव

पहली बारिश में ही किस तरह से हमारी नगर व्यवस्था डूबने-उतराने लगती है, इसका अनुभव करना हो, तो दिल्ली-एनसीआर की गुरुवार की बारिश की तस्वीरें देख लीजिए। अभी यहां बमुश्किल एक-दो दिन ही ढंग से वर्षा हुई है, लेकिन दिल्ली, गाजियाबाद, गुरुग्राम के कई इलाकों में जलभराव की स्थिति बन गई है। स्थिति यह है कि टीवी रिपोर्टर तैरकर रिपोर्टिंग कर रहे हैं। गली-मोहल्लों की बात ही छोड़ दीजिए, जहां नालियां इस मौसम में उफनती रहती हैं, इस समय कई अंडरपास की तो और भी बुरी स्थिति बन जाती है, क्योंकि वहां पानी इतना जमा हो जाता है कि बस तक डूब सकती है।

कहने के लिए हर सरकार अपने अधिकारियों को यही निर्देश देती है कि वे जलभराव की स्थिति न पैदा होने दें और बरसात से पूर्व ही जल-निकासी की व्यवस्था की उचित जांच-पड़ताल कर लें। मगर ये बातें सिर्फ कहने के लिए होती हैं। अधिकारियों को पता होता है कि किस कथन पर उनको कितना अमल करना है। यही कारण है कि वीआईपी इलाकों को छोड़ दें, तो पूरा शहर बारिश में डूब जाता है, जबकि जल-निकासी की व्यवस्था यदि दुरुस्त हो, तो बरसात का पानी कहीं ठहर नहीं सकता। वह तो बहते हुए सीधे नदियों में चला जाए। दिक्कत सिर्फ ठहरे हुए पानी से नहीं होती, वास्तव में, ऐसे जलभराव लोगों की जान भी लेते हैं। जैसे- गुरुवार की बारिश में ही गुरुग्राम और पलवल में दस लोगों की मौत हो गई, जिसमें उस युवक की मौत भी शामिल है, जो बिजली के खंभे में करंट उतर आने के कारण असमय काल का शिकार बन गया। गुरुग्राम के सदर्न पेरिफेरल रोड पर तो एक बड़ा गड्ढा बन गया, जिसमें एक ट्रक पलट गया। यहां के मेदांता अंडरपास के पास भी ऐसा जलभराव हो गया कि यातायात को रोकना पड़ा। खबर है कि जलभराव के कारण गुरुग्राम में कई लोग रात भर सड़कों पर फंसे रहे। दुखद है कि यह स्थिति उस शहर की है, जिसे 'मिलेनियम सिटी' कहा जाता है और जहां ऊंची-ऊंची इमारतों में राष्ट्रीय-अंतरराष्ट्रीय स्तर की कंपनियां दिन-रात काम करती रहती हैं। सोचिए, इससे दुनिया भर में भारत की कैसी छवि बन रही होगी?

यदि हम अपने नागरिकों को अच्छी सुविधाएं देना चाहते हैं, तो सबसे पहले अपनी व्यवस्था सुधारनी होगी। संबंधित अधिकारियों को यह एहसास दिलाना होगा कि लोगों की सुरक्षा और जलभराव जैसी समस्याओं से निपटारा उनकी प्राथमिक जिम्मेदारी है। अगर वे अपनी जिम्मेदारी का निर्वहन नहीं कर सकते, तो उनके खिलाफ सख्त कार्रवाई होनी चाहिए। यही मौजूदा वक्त की सबसे बड़ी मांग है।

समिधा मिश्र, टिप्पणीकार

अनुलोम-विलोम

जलभराव

लोगों को अपनी सोच बदलनी होगी

बारिश में जलभराव होना आम बात है। आखिर कौन शहर या इलाका यह दावा कर सकता है कि बारिश में उसकी सड़कों पर पानी जमा नहीं होता? मगर मुश्किल यह है कि किसी को अपनी गलती नहीं दिखती। स्थानीय प्रशासन की आलोचना करने वाले लोगों ने कभी यह सोचा कि नालियां आखिर क्यों इतनी जाम रहती हैं? नालियों की साफ-सफाई के दौरान प्लास्टिक की जो बोतलें या प्लास्टिक कचरे मिलते हैं, उनको कौन फेंकता है? इन सबकी वजह क्या है? क्या स्थानीय प्रशासन के लोग प्लास्टिक को नालियों में बहाते हैं? साफ है, पहले खुद में सुधार लाना होगा, फिर व्यवस्था पर उंगली उठाने के आप अधिकारी बन सकते हैं।

निस्संदेह, शहरी जलभराव बरसात के मौसम में एक गंभीर समस्या है और इसका जल्द से जल्द निराकरण किया जाना चाहिए। सुखद है कि इसके लिए स्थानीय प्रशासन लगातार प्रयासरत है। अधिकारी बरसात से पहले नालियों या बड़े नालों की सफाई कराते हैं। जलभराव के वक्त भी मोटर आदि से पानी निकाला जाता है। मगर दिक्कत यह है कि सड़कों आदि पर फेंका गया कूड़ा, विशेषकर पॉलीथिन, बारिश के पानी में बहकर नालियों में जमा हो जाता है, जिससे हल्की सी बारिश में भी हम जलभराव जैसी बड़ी समस्या से जूझने लगते हैं। ऐसा नहीं है कि स्थानीय प्रशासन के लोग इससे गाफिल हैं। वे तो जहां-तहां कचरे के डिब्बे भी रखवाते हैं, ताकि लोग उसमें प्लास्टिक के कचरे फेंक सकें। मगर कई लोग इधर-उधर कचरा फेंकना अपना विशेषाधिकार समझते हैं। फिर, कई जगहों पर अनियोजित निर्माण-कार्यों से भी जलभराव की स्थिति पैदा होती है। दिल्ली की बात करें, तो अव्वल यहां की गलियां पतली हैं, फिर सरकारी जमीन पर हरसंभव अतिक्रमण करने की कोशिशों में लोग लगे रहते हैं। यहां तक कि सड़कों के किनारे की नालियों तक का अतिक्रमण कर लिया जाता है। ऐसे में, जब नालियां बंद हो जाएंगी, तो पानी सड़कों पर ही जमा होगा। रही-सही कसर शहर के अनियोजित विस्तार से पूरी हो जाती है, जिसमें जल निकासी का कुदरती रास्ता बाधित कर दिया जाता है और बारिश का पानी इलाकों में ठहरने लगता है।

मैं यहां स्थानीय प्रशासन को पूरी तरह निर्दोष नहीं मानता, क्योंकि काफी हद तक इसकी निगरानी की जिम्मेदारी उसी की है, जिसमें वह नाकाम साबित हो रहा है। मगर जब कर्मियों की संख्या सीमित हो, तो फिर प्रशासन भी आखिर कहां-कहां नजरें जमाए बैठा रहेगा? साफ-सफाई के बारे में तो आम लोगों को भी सोचना चाहिए। अगर हम अपनी जिम्मेदारी समझने लगें, तो इस समस्या से भी निजात पा लेंगे।

दीपक कुमार, टिप्पणीकार

बिज़नेस स्टैंडर्ड
वर्ष 18 अंक 126

स्पष्टता की कमी

गत 12 जून को अहमदाबाद से लंदन जा रही एयर इंडिया की उड़ान संख्या 171 के दुर्घटनाग्रस्त होने के बाद आई एयरक्राफ्ट एक्सिडेंट इन्वेस्टिगेशन ब्यूरो (एएआईबी) की प्रारंभिक जांच के नतीजों ने जवाब देने के बजाय नए प्रश्न खड़े कर दिए हैं। उस हादसे में 260 लोगों की मौत हो गई थी। इंटरनैशनल सिविल एविएशन ऑर्गनाइजेशन (आईसीएओ) की अनुशंसाओं के पालन के अंतर्गत 2012 में गठित एएआईबी की रिपोर्ट महत्त्वपूर्ण है क्योंकि यह टाटा समूह द्वारा एयर इंडिया के अधिग्रहण के तीन साल पूरे होने के कुछ समय बाद आई है। परंतु रिपोर्ट के निष्कर्ष में अटकल वाले तत्व शामिल हैं, जो न तो पीड़ितों के परिजनों को संतुष्ट कर पाएंगे और न ही विमानन उद्योग के सुरक्षा प्रोटोकॉल को स्पष्टता दे पाएंगे। रिपोर्ट में विमान चालकों की भूमिका को लेकर अस्पष्टता भी परेशान करने वाली है।

एयर इंडिया का अहमदाबाद से लंदन जा रहा विमान एआई 171 उड़ान भरने के 30 सेकंड के भीतर दुर्घटनाग्रस्त हो गया था। यह विमान एक भीड़ भरे इलाके में चिकित्सकों के छात्रावास पर गिर गया था। दुर्घटना के ठीक पहले एक विमान चालक ने 'मे डे' की आपातकालीन पुकार लगाई थी। एएआईबी की प्रारंभिक रिपोर्ट कहती है कि इंजनों की ईंधन आपूर्ति उड़ान भरने के तुरंत बाद बंद हो गई थी क्योंकि फ्यूल कंट्रोल स्विचों को 'चालू' से 'बंद' कर दिया गया था। कॉकपिट वॉयस रिकॉर्डर की रिकॉर्डिंग के हवाले से रिपोर्ट में कहा गया है कि एक पायलट ने दूसरे से पूछा कि उसने फ्यूल स्विच बंद क्यों किया? इस पर दूसरा पायलट कहता है कि उसने स्विच बंद नहीं किया। रिपोर्ट आवाजों की पहचान नहीं करती। रिपोर्ट में 2018 के अमेरिकी फेडरल एविएशन एडमिनिस्ट्रेशन के एक बुलेटिन का भी हवाला दिया गया, जिसमें फ्यूल स्विच की लॉकिंग प्रणाली में दिक्कत की बात कही गई थी। चूंकि यह बुलेटिन मशविरे की प्रकृति का था और इस मुद्दे को असुरक्षित नहीं माना गया था और वह कानूनी रूप से प्रवर्तनीय निर्देशों की मांग नहीं करता था इसलिए एयर इंडिया ने अपने बेड़े के विमानों की जांच नहीं करवाई थी। रिपोर्ट का यह कथन भी अस्पष्टता बढ़ाता है कि बोइंग या जीई जीईएनएक्स 1 इंजन निर्माताओं के लिए किसी कार्रवाई की अनुशंसा नहीं की गई।

एएआईबी की 15 पन्नों की रिपोर्ट के साथ दिक्कत यह है कि इसने पायलटों की चूक की अटकलों को जन्म दिया है। इसे खराब ढंग से कहें तो यह पायलट द्वारा आत्मघाती ढंग से उठाए कदम का संकेत है। रिपोर्ट के नतीजों का पीड़ितों के परिजनों को किए जाने वाले भुगतान पर कोई असर नहीं होगा लेकिन विशेषज्ञों ने रिपोर्ट की तीखी आलोचना की है और कहा है कि फ्यूल बंद होना मानवीय चूक थी या तकनीकी खामी, इस विषय पर अधिक जानकारी की जरूरत है। यह भी लगता है कि रिपोर्ट में प्रस्तुत घटनाक्रम भ्रामक है। रिपोर्ट में कहा गया है कि फ्यूल कंट्रोल स्विच को उड़ान के कुछ ही सेकंड के बाद बंद कर दिया गया। रिपोर्ट यह भी कहती है कि रैम एयर टर्बाइन या बैकअप पॉवर सोर्स जो केवल तभी काम करता है जब दोनों इंजन फेल हो जाते हैं, वह उड़ान भरने के तुरंत बाद सक्रिय हो गया था। इससे संकेत मिलता है कि विमान के जमीन से ऊपर उठते ही दोनों इंजन बंद हो गए थे। कॉकपिट वॉयस रिकॉर्डर तथा अन्य तकनीकी आंकड़ों की पूरी जानकारी के बिना हादसे की वजह पता चलनी मुश्किल है।

नागर विमानन मंत्री राम मोहन नायडू ने सही कहा है कि मीडिया और जनता को नतीजों पर नहीं पहुंचना चाहिए क्योंकि ये प्रारंभिक निष्कर्ष एक जटिल जांच की शुरुआत हैं जो कम से कम एक साल चलेगी। सवाल यह है कि इतनी अस्पष्ट रिपोर्ट जारी क्यों की गई। एएआईबी की जांच टीम के पास विशेषज्ञता की कमी नहीं है। इसका नेतृत्व महानिदेशक के पास है जो भारतीय वायु सेना के पूर्व एरोनॉटिकल इंजीनियर हैं। इसमें अमेरिकी नैशनल ट्रांसपोर्टेशन सेफ्टी बोर्ड के सदस्य, एक एयर ट्रैफिक कंट्रोल अधिकारी और एक विमानन चिकित्सा विशेषज्ञ शामिल हैं। भारत ने आईसीएओ के विशेषज्ञ को भी पर्यवेक्षक दर्जा देने का अनुरोध स्वीकार किया है ताकि जांच के नतीजे अधिक स्पष्ट रूप से सामने आ सकें।

भागवत का ताजा बयान और मोदी के कदम का अनुमान

भाजपा में वंशवादी उत्तराधिकार की व्यवस्था नहीं है। युवा प्रतिभाओं को पहचानने और सशक्त बनाने की प्रक्रिया को भाजपा अध्यक्षों के चयन में और स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है।

राष्ट्र की बात

शेखर गुप्ता

राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ (आरएसएस) के प्रमुख यानी सरसंघचालक मोहन भागवत ने कहा है कि 75 वर्ष की आयु पूरी करने के बाद नेताओं को सेवानिवृत्त होने और युवा सहयोगियों के लिए स्थान बनाने के बारे में सोचना चाहिए। उनके इस बयान को इस तरह नहीं देखा जाना चाहिए कि उन्होंने कुछ गलत या अजीब कह दिया है।

भारतीय जनता पार्टी (भाजपा) और आरएसएस के बीच के रिश्तों की बात करें तो सावधानी बरतनी आवश्यक है क्योंकि प्रधानमंत्री मोदी हमेशा अपवाद रहेंगे। भागवत के 75 वर्ष की आयु पूरी करने के छह दिन बाद यानी 17 सितंबर को मोदी भी 75 वर्ष के हो जाएंगे। ऐसे में यह सोचना कि भागवत का इशारा मोदी की ओर है, कुछ ज्यादा हो जाएगा। बहरहाल सरसंघचालक को कभी हल्के में नहीं लिया जा सकता। इस मामले में भागवत ने मराठी में भाषण देते हुए केवल 75 वर्ष की उम्र में सेवानिवृत्ति वाली बात हिंदी में कही। यहां जुबान फिसलने जैसी कोई बात नहीं थी। न ही गलत व्याख्या जैसी।

जो लोग राष्ट्रीय राजनीति पर नजर रखते हैं, मैं अनुमान लगा सकता हूं कि वे तत्काल क्या प्रश्न कर सकते हैं। वे मुझे 2005 में आरएसएस प्रमुख केएस सुदर्शन के दो भाग में मेरे द्वारा लिए साक्षात्कार की याद दिला सकते हैं। उन्होंने उस समय अटल बिहारी वाजपेयी (80 वर्ष) और लाल कृष्ण आडवाणी (77 वर्ष) से कहा था कि वे युवाओं के लिए जगह बनाएं। उन्होंने वाजपेयी के दामाद, करीबी सहयोगी ब्रजेश मिश्रा और उनकी काम करने की शैली पर भी हमले किए। जब मैंने उन्हें याद दिलाया कि वाजपेयी ने अपनी सेवानिवृत्ति की अटकलों को 'न टायर्ड, न रिटायर्ड' कहकर खारिज किया है तो उन्होंने और तीखी प्रतिक्रिया दी थी।

चूंकि वाजपेयी और आडवाणी की जोड़ी उस समय भाजपा पर बहुत हद तक नियंत्रण रखे हुए थी। उन्हें पार्टी के संस्थापकों के रूप में सम्मान हासिल था और उस समय उनकी जगह लेने वाला भी कोई सामने नहीं था। यही वजह थी कि सुदर्शन को आलोचना का सामना करना पड़ा था। हालांकि यह आलोचना भी कानाफूसी के रूप में ही नजर आई। दरअसल एक साल पहले ही पार्टी आम चुनाव में हारी थी और पार्टी उस समय उत्तराधिकार की लड़ाई में नहीं उलझ सकती थी। वह जानते थे कि वह क्या कर रहे थे और समय के साथ उनकी गलती साबित भी हुई।

इसके बाद ही पार्टी में संभावित उत्तराधिकारियों की एक पूरी कतार नजर आने लगी। राजनाथ सिंह, सुषमा स्वराज, अरुण जेटली, नितिन गडकरी और सबसे उल्लेखनीय अहमदाबाद में नरेंद्र मोदी। एक तरह से उन्होंने भाजपा के भीतर पार्टी नेतृत्व के लिए अमेरिकी प्राइमरी शैली की प्रतिस्पर्धा शुरू की। मोदी ने 2012 में तीसरी बार गुजरात चुनाव जीतने के साथ ही इसे जीत लिया था। आप भाजपा और आरएसएस को पसंद करें या नहीं लेकिन आपको यह मानना होगा कि भारतीय राजनीति में सबसे मजबूत और बेहतर मानव संसाधन व्यवस्था उनके पास है।

यह कहना विषयांतर होगा लेकिन यह कहना महत्त्वपूर्ण है कि देश के राजनीतिक इतिहास के सभी दलों में केवल भाजपा ही ऐसा है जिसमें सबसे कम बगावत या विभाजन देखने को मिले हैं। विचारधारात्मक जुड़ाव ही उन सभी को एक छतरी के तले बनाए रखता है। पार्टी छोड़कर जाने वाले कई नेता वापस लौट आए। उदाहरण के लिए कल्याण सिंह और येदियुरप्पा। बाहर जाने वाले अन्य नेता मसलन शंकर सिंह वाघेला, बलराज मधोक आदि अप्रासंगिक हो गए। उन्हीं दशकों में कांग्रेस में कई बार विभाजन हुए। उससे अलग होकर इतनी पार्टियां बनीं कि लगा मानों उनके संक्षिप्त नाम के लिए वर्णमाला के अक्षर तक अपर्याप्त हो जाएंगे। जनता दल, समाजवादी और लोकदल आदि सभी का यही हाल हुआ लेकिन भाजपा के साथ ऐसा नहीं हुआ।

भाजपा में कम से कम शीर्ष पर कोई वंशवादी उत्तराधिकार नहीं था। यह सही है कि पार्टी में आज भी कई संस्थापकों और वरिष्ठों की संतानें प्रमुख पदों पर हैं लेकिन उत्तराधिकार कभी भी सीधा-सपाट नहीं रहा। यह सत्ता के हस्तांतरण से अधिक किसी संतान को 'समायोजित' करने का मामला था।

इसकी जड़ें वाजपेयी-आडवाणी के युग में तलाशी जा सकती हैं। उन्होंने अत्यंत युवा मुख्यमंत्री चुनेः वसुंधरा राजे, शिवराज सिंह चौहान, रमन सिंह, नरेंद्र मोदी, इन सभी की औसत आयु 49 वर्ष थी। भाजपा के अध्यक्षों को देखें तो युवाओं के चयन की बात और अधिक स्पष्ट होती है। 2002 में वेंकैया नायडू 53 साल की उम्र में पार्टी अध्यक्ष बने। 2005 में राजनाथ सिंह 54 की उम्र में, 2009 में नितिन गडकरी 48 साल में और 2014 में अमित शाह केवल 49 साल की उम्र में पार्टी के अध्यक्ष बने।

इसके विपरीत इस पूरी अवधि में सोनिया गांधी कांग्रेस अध्यक्ष बनी रहीं। बाद में राहुल गांधी और फिर मल्लिकार्जुन खरगे अध्यक्ष बने जो 80 वर्ष के हैं। इस बीच कांग्रेस की युवा प्रतिभाएं तितर-बितर हो गईं। कुछ ने हताश होकर भाजपा की सदस्यता ले ली। दूसरे पार्टी में बने रहे लेकिन उनकी हताशा और बढ़ गई। हम दोनों दलों के वैचारिक विरोध पर बहुत अधिक ध्यान देते हैं जबकि हमें उनके मानव संसाधन संबंधी व्यवहार पर तवज्जो देनी चाहिए।

2014 के बाद भी भाजपा में इस सिद्धांत का पालन किया गया। जे पी नड्डा 59 वर्ष की आयु में पार्टी के अध्यक्ष बने। नए मुख्यमंत्री, योगी आदित्यनाथ (उप्र), भजन लाल शर्मा (राजस्थान), मोहन यादव (मप्र), विष्णुदेव साय, मोहन चरण मांझी, विप्लव देव और हिमंत विश्व शर्मा, मनोहर लाल खट्टर, देवेंद्र फडणवीस, प्रमोद सावंत, पुष्कर सिंह धामी, रेखा गुप्ता, शपथ ग्रहण के समय इन सभी की औसत आयु 51 वर्ष थी। कांग्रेस ने तेलंगाना और हिमाचल प्रदेश में युवा नेतृत्व को अवसर दिया लेकिन सबसे महत्त्वपूर्ण राज्य कर्नाटक में पार्टी सिद्धरमैया जैसे पुराने नेता को बनाए हुए है।

सबसे अधिक ध्यान देने लायक तथ्य यह है कि भाजपा का वैचारिक गुरु माना जाने वाला आरएसएस अपनी सलाह पर ध्यान देता रहा है। सबसे अधिक उम्र में सरसंघचालक के रूप में काम करने वालों में सुदर्शन (2009), राजेंद्र सिंह उर्फ रज्जू भैया (2000) और मधुकर दत्तात्रेय 'बालासाहेब' देवरस (1994) रहे। अधिकतम आयु 78 वर्ष की रही।

संघ के संस्थापकों की बात करें तो केशव बलिराम हेडगेवार और एमएस गोलवलकर 1940 और 1973 में क्रमशः 51 और 67 वर्ष की आयु में पद पर रहते हुए ही गुजर गए। ये सभी कम उम्र में सरसंघचालक बने। वर्तमान सरसंघचालक के साथ भी ऐसा ही है।

तथ्य यह है कि तमाम अफवाहों और अटकलों के बावजूद भाजपा के भीतर से किसी ने 75 वर्ष की सेवानिवृत्ति आयु की बात नहीं की। केवल आडवाणी, मुरली मनोहर जोशी और अन्य नेताओं को मार्गदर्शक मंडल में भेजते समय ऐसी कानाफूसी सुनी गई थी। इसके साथ ही कुछ मंत्री पद पर बने भी रहे जिनमें कलराज मिश्र और नजमा हेपतुल्ला शामिल हैं। आगे चलकर इन्हें राज्यपाल बना दिया गया। हालिया लोक सभा चुनावों में हेमा मालिनी को मथुरा से टिकट दिया गया हालांकि वह 75 वर्ष की आयु पार कर चुकी हैं। शायद ऐसा हमें यह याद दिलाने के लिए किया गया कि ऐसा कोई नियम नहीं है। आनंदीबेन पटेल ने 2016 में गुजरात के मुख्यमंत्री पद से इस्तीफा देते हुए कहा था कि वह 75 वर्ष की हो चुकी हैं। जाहिर है वह मोदी के लिए नजीर नहीं बन सकता।

11 सितंबर की तारीख पर नजर रखनी होगी। भागवत उसी दिन 75 वर्ष के होंगे। अगर वह अपनी ही सलाह पर अमल करते हुए सेवानिवृत्त होने का तय करते हैं तो कम से कम भाजपा में मोदी को लेकर चर्चा शुरू होगी। क्या कोई चुनौती सामने आएगी? क्या कोई 2009 के बाद की प्राइमरी जैसी प्रक्रिया चाहेगा? यह असंभव तो नहीं लेकिन मुश्किल जरूर है।

जैसे-जैसे 2028 का अंत करीब आएगा, भाजपा के महत्त्वाकांक्षी नेताओं में से कुछ का धैर्य चुकने लगेगा। परंतु कोई दावा करने की हिम्मत नहीं करेगा। मोदी इतने ताकतवर हैं कि वह स्वयं फैसला कर सकते हैं कि वह कब तक पद पर रहेंगे। यकीनी तौर पर वह 2029 का चुनाव लड़ना चाहेंगे। उस समय वह केवल 79 वर्ष होंगे यानी जितनी डॉनल्ड ट्रंप की वर्तमान आयु है। बाकी नेताओं को मोदी के निर्णय या संकेत की प्रतीक्षा करनी होगी। भले ही पार्टी के भीतर उम्मीदवार चयन की प्रक्रिया गोपनीय ढंग से शुरू भी हो गई हो।

लोगों के लिए संकट बन रही वैश्विक अव्यवस्था

जमीनी हकीकत

सुनीता नारायण

पिछले कुछ महीनों से एक ऐसा समय देखने को मिल रहा है जो इस वक्त की हकीकत है लेकिन यह अवास्तविक सा लगता है। हमारी दुनिया एक लट्टू की तरह धुरी पर घूमती प्रतीत होती है जिस पर लगता है कि किसी का नियंत्रण नहीं है। मैं यह विशेष रूप से उन लोगों के लिए कह रही हूं जिन्होंने मेरी तरह ही अपने जीवन के पांच दशक पूरे कर लिए हैं और जो औपनिवेशिक काल के बाद के दौर में बड़े हुए। इस पीढ़ी ने एक ऐसी वैश्विक व्यवस्था देखी है जिसमें बेहद असमानता थी लेकिन फिर भी उस व्यवस्था में सुधार संभव लगता था। संभवतः वह थोड़ी मासूमियत का दौर था। लेकिन हमें वैश्विक कानून के शासन से उम्मीदें थीं।

निश्चित तौर पर संयुक्त राष्ट्र की इसमें एक अहम भूमिका थी। भले ही सुरक्षा परिषद, तब और अब, एक ऐसी संस्था थी जो एक असमान और अनुचित वैश्विक शक्ति व्यवस्था को प्रतिबिंबित करती थी - लेकिन यह गलत के खिलाफ, सही के साथ खड़ा था। अब ऐसा लगता है कि जैसे हमारे पैरों तले जमीन खिसक गई है और हम खो गए हैं। निश्चित रूप से, मैं इस वैश्विक व्यवस्था को नहीं समझ पा रही हूं जहां कोई देश किसी भी उकसावे के बिना, दूसरे देश पर बमबारी करते हुए एकतरफा कार्रवाई कर सकता है और दुनिया बिल्कुल असहाय और खामोश होकर यह सब देखती रहती है। अब आलम यह है कि हम दूसरे देश में सत्ता परिवर्तन की बात सुनते हैं और इसे बेहद सामान्य मानकर टाल देते हैं। हम तनाव न लेने के लिए ज्यादा से ज्यादा यही करते हैं कि टीवी चैनल बदल देते हैं क्योंकि हम इसे और नहीं देख सकते। हम पूरी तरह से लाचार हैं।

ईरान पर हाल का हमला केवल अमेरिका या इजरायल के सही या गलत होने से नहीं जुड़ा है बल्कि यह नियमों पर बनी वैश्विक व्यवस्था के भविष्य से जुड़ा है जिस पर विभिन्न राष्ट्रों ने सहमति जताई थी और फिर वैश्विक संस्थाओं के माध्यम से लागू किया था। इस मामले में ईरान, परमाणु अप्रसार संधि (एनपीटी) का एक हस्ताक्षरकर्ता देश है और यह संधि, परमाणु हथियारों के खिलाफ एक अंतरराष्ट्रीय समझौता है। वर्ष 1970 में लागू हुई इस संधि को व्यापक रूप से सफल माना जाता है। इस संधि से 191 देश, पक्षकार के तौर पर जुड़े हैं और उन्होंने यह स्वीकार किया है कि 'परमाणु हथियारों का प्रसार, परमाणु युद्ध के खतरे को गंभीरता से बढ़ाएगा।' इस संधि के एक हस्ताक्षरकर्ता देश के रूप में, ईरान को परमाणु हथियार हासिल करने से प्रतिबंधित किया गया है। वियना में मौजूद, अंतरराष्ट्रीय परमाणु ऊर्जा एजेंसी (आईएईए) को यह सुनिश्चित करना होता कि इन नियमों का पालन किया जाए। ईरान आईएईए की सुरक्षा प्रणाली के नियमों के अंतर्गत आता है और इस क्षेत्र की भू-राजनीतिक अहमियत को देखते हुए, इस क्षेत्र को व्यापक रूप से कड़ी निगरानी व्यवस्था के दायरे में माना जाता है।

एनपीटी के तहत, पांच देशों को परमाणु हथियार संपन्न राष्ट्रों के रूप में मान्यता मिली है जिनमें अमेरिका, रूस, ब्रिटेन, फ्रांस और चीन शामिल हैं और इसमें आप यह तर्क दे सकते हैं कि यह भेदभावपूर्ण है। ये सभी देश संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद के स्थायी सदस्य भी हैं। भारत और पाकिस्तान ने अपनी परमाणु-हथियार क्षमता घोषित की है लेकिन एनपीटी पर हस्ताक्षर नहीं किए हैं, वहीं उत्तर कोरिया इससे बाहर हो चुका है। लेकिन इजरायल की वजह से यह स्थिति और भी 'अवास्तविक' हो जाती है जिसने ईरान की परमाणु महत्त्वाकांक्षाओं को अपने अस्तित्व के लिए खतरा बताया है जबकि उसने खुद भी कभी एनपीटी पर हस्ताक्षर नहीं किए हैं।

व्यापक तौर पर यह बात स्वीकारी जाती है कि इजरायल का एक गुप्त परमाणु-हथियार कार्यक्रम चल रहा है। यहां एक देश, वैश्विक नियमों से बंधा हुआ है और उस पर एक ऐसे देश द्वारा हमले किए जा रहे हैं खुले तौर पर वैश्विक नियमों और संस्थाओं को नकारता है। ऐसे में यह एक बहुपक्षवाद या अव्यवस्था पर नहीं बल्कि व्यवस्थाओं पर आधारित वैश्विक व्यवस्था के भविष्य के बारे में क्या संदेश देता है?

मई महीने में ईरान पर आईएईए की रिपोर्ट में इसके महानिदेशक ने कुछ मुद्दों पर अपने निरीक्षकों की चिंता उठाई थी जिनमें 'संवर्धित यूरेनियम का तेजी से भंडारण' करने की बात शामिल थी। लेकिन रिपोर्ट में कहीं भी यह नहीं कहा गया है कि उनके पास इस बात के सबूत हैं कि ईरान के पास परमाणु हथियार हैं जिसके लिए किसी देश को यूरेनियम को 90-95 फीसदी तक संवर्धित करने की आवश्यकता होती है।

इसके अलावा इस मुद्दे पर अगला कदम, संबंधित पक्ष के साथ चर्चा करना होना चाहिए था और अगर आवश्यक हो तब इस मामले को संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद में ले जाना चाहिए था। इस तरह की चिंता का उपाय, देश के परमाणु ऊर्जा और अन्य संबंधित स्थलों पर बमबारी करना नहीं हो सकता, जिससे विनाशकारी रिसाव का खतरा पैदा हो जाए।

इन सभी परिस्थितियों में हमें पूछना होगा कि इसके कारण आईएईए की विश्वसनीयता कहां रह जाती है? आईएईए सभी देशों में सुरक्षा उपायों को बनाए रखने की भूमिका कैसे निभा सकता है? यदि किसी दूसरे पर बमबारी करने के लिए केवल शक्ति और आक्रामक बल का उपयोग करना ही काफी है तब देशों को कानून के शासन की औपचारिकताएं बनाए रखने की परवाह क्यों करनी चाहिए?

संयुक्त राष्ट्र और इसके महासचिव की भूमिका तार-तार हो गई है क्योंकि अब इनकी भूमिका केवल प्रेस विज्ञप्ति जारी करने और ऐसी सलाह देने तक सीमित है जिसे कोई नहीं सुनता। हमें वास्तव में यह पूछने की जरूरत है कि ये संस्थाएं अपनी जमीन पर क्यों नहीं खड़ी हो रही हैं या फिर इस तरह की अव्यवस्था को दूर करने में कोई भूमिका क्यों नहीं निभा रही हैं? क्या ये इस हद तक समझौता कर चुकी हैं या उन्होंने कुछ देशों के आक्रामक व्यवहार के सामने हार मान ली है? यह एक परस्पर निर्भर वैश्विक व्यवस्था के लिए आगे बढ़ने का रास्ता नहीं है। मैं यह इसलिए पूछती हूं क्योंकि यहां बहुत कुछ दांव पर लगा है। हम जानते हैं कि जलवायु परिवर्तन का खतरा वास्तविक है और इसके लिए दुनिया को एक साथ काम करने की आवश्यकता है। यह साझा संसाधनों का एक वास्तविक संकट है और इसे सभी की भागीदारी के बिना हल नहीं किया जा सकता है।

एक टूटी हुई वैश्विक व्यवस्था जिसमें वैश्विक संस्थाएं बरबाद और कलंकित हो चुकी हैं, वे ऐसे और इसी तरह के अन्य वैश्विक मुद्दों का समाधान खोजने के लिए काम नहीं करेंगी। हम जानते हैं कि फिलहाल जिसकी लाठी उसकी भैंस है, लेकिन यह मर्दाना प्रकृति की और युद्धरत वैश्विक अव्यवस्था, मनुष्यों या प्रकृति के साथ शांति व्यवस्था नहीं बना पाएगी।

(लेखिका सेंटर फॉर साइंस ऐंड एनवायरनमेंट से जुड़ी हैं)

आपका पक्ष

संतुलित हस्तक्षेप से ही स्थायित्व

संपादकीय 'अतिरिक्त नकदी का प्रबंधन' से बैंकिंग के अंदरूनी हालात उजागर होते है। हाल के महीनों में भारतीय बैंकिंग व्यवस्था में नकदी की स्थिति में तीव्र परिवर्तन देखा गया है। जहां 2024 के अंत तक बैंकिंग प्रणाली में 2 लाख करोड़ रुपये की कमी थी वहीं अब यह स्थिति उलटकर 3 से 4 लाख करोड़ रुपये प्रतिदिन के अधिशेष तक पहुंच गई है। यह अतिरिक्त नकदी ब्याज दरों को नीचे लाती है और बैंकिंग प्रणाली में नीतिगत अनुपालन सुनिश्चित करती है। इससे परिसंपत्ति-मूल्य मुद्रास्फीति का जोखिम भी बढ़ता है। जैसे-जैसे प्रणाली में पैसे की आपूर्ति बढ़ेगी, बैंक बचत जमा दरों में कटौती करेंगे और बचतकर्ता उच्च रिटर्न वाली परिसंपत्तियों की ओर रुख करेंगे जिससे स्टॉक और बॉन्ड मार्केट में उछाल की संभावना है। बचत जमा दरों में गिरावट के कारण आम निवेशक जोखिमपूर्ण परंतु उच्च यील्ड वाली परिसंपत्तियों की ओर झुक सकते हैं। अधिशेष नकदी से दीर्घकालिक मुद्रास्फीति, अचल संपत्ति और शेयर बाजार में मूल्य वृद्धि जैसे प्रभाव संभावित हैं। भारतीय रिजर्व बैंक को इस नकदी अधिशेष की निगरानी कर संतुलन बनाए रखना होगा ताकि मुद्रास्फीति और वित्तीय असंतुलन से बचा जा सके। संतुलित हस्तक्षेप ही स्थायित्व की कुंजी है।

अमृतलाल मारू 'रवि', इंदौर

जैसे-जैसे प्रणाली में पैसे की आपूर्ति बढ़ेगी, बैंक बचत जमा दरों में कमी करेंगे और बचतकर्ता उच्च रिटर्न वाली परिसंपत्तियों का रुख करेंगे

आबादी संकट नहीं

लेख 'आबादी के संकट को टालने के क्या हों उपाय' आबादी को संकट के रूप में प्रस्तुत करता है। इसके साथ ही बढ़ती जनसंख्या को सरकारों के समक्ष चुनौती के रूप में मान्यता देता है। आबादी को लेकर जैसा स्वरूप दिखाई देता है, वह स्पष्ट रूप से यथार्थ के रूप में व्यक्त किया गया है। जब तक आबादी को संकट माना जाएगा, वह कठिन चुनौती के रूप में संकट समाधान स्वरूप हमें डराएगा। जब तक नौकरियों को सरकारी जिम्मेदारी के रूप सरकार नीति निर्धारण करेगी, कोई उचित और पर्याप्त समाधान नहीं निकल सकता। जब तक वृद्ध जनसंख्या परिवार की जिम्मेदारी नहीं होगी, सरकार अरबों रुपये खर्च करके भी उनकी आवश्यकता पूरी नहीं कर सकती भले ही परिवार स्वैच्छिक रूप उनकी देखभाल करें या कानूनी बाध्यता से करे। जब तक नौकरियां स्वावलंबन और उद्यमिता का पर्याय नहीं बनेंगी समाधान नहीं होगा। कोई सरकार 50 से 60 करोड़ नौकरियां नहीं सृजित कर सकतीं, बल्कि यह राजनीतिक क्लेश का रूप धारण कर लेती है। सरकार की जिम्मेदारी उद्यमिता, औद्योगिक क्षेत्र और नियामक व्यवस्था स्थापित करने की है। आज भी लाखों कामगारों और श्रमिकों को काम की तलाश में दूसरे प्रदेशों में जाना पड़ता है। देशभर में कानून व्यवस्था दुरुस्त रहे तभी उद्योग व्यापार समृद्ध होता है, नहीं तो पलायन होता है। जब तक विकास राष्ट्रीय और राज्य स्तर की राजनीति के केंद्र में स्थापित नहीं होगा, तब तक आबादी, नौकरियां और समाज कल्याण चुनौतियां ही बनी रहेंगी। गांव के गांव कुशल कारीगरों, कृषि श्रमिकों से खाली हो रहे हैं, विद्यालयों में अध्यापकों की कमी है, फैक्टरियों में कुशल कारीगरों की कमी है, फिर कहते हैं कि आबादी और नौकरी समस्या है।

विनोद जौहरी, दिल्ली

पाठक अपनी राय हमें इस पते पर भेज सकते हैं : संपादक, बिज़नेस स्टैंडर्ड, 4, बहादुर शाह जफर मार्ग, नई दिल्ली 110002. आप हमें ईमेल भी कर सकते हैं : lettershindi@bsmail.in
पत्र/ईमेल में अपना डाक पता और टेलीफोन नंबर अवश्य लिखें।

देश-दुनिया

फोटो - पीटीआई

विदेश मंत्री एस जयशंकर ने सिंगापुर में वहां के विदेश मंत्री विवियन बालकृष्णन से मुलाकात की। इस दौरान दोनों मंत्रियों ने विभिन्न मुद्दों पर विमर्श किया।

20 से 25 प्रतिशत तक जनसंख्या है उत्तर भारत (यूपी, एमपी, बिहार) के लोगों की मुंबई में, जबकि इतनी ही संख्या यहां गुजरातियों की भी है। वहीं, इस महानगर में दक्षिण भारत के लोगों की संख्या भी लगभग 10 प्रतिशत है।

कैलाश विश्नोई
उच्च शिक्षा मामलों के जानकार

आजकल

भारतीय भाषाओं की सेतु है त्रिभाषा नीति

त्रिभाषा नीति पर महाराष्ट्र में हाल के दिनों में जिस प्रकार विवाद खड़ा हुआ है, वह मात्र एक राज्य की भाषा को लेकर चिंता नहीं है। वस्तुतः यह भारत जैसे बहुभाषी राष्ट्र के आत्मा को झकझोरने वाला चिंताजनक मामला बन गया है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति- 2020 में दिए गए त्रिभाषा फार्मूले को लेकर जिस तरह की राजनीति महाराष्ट्र में देखने को मिली, वह न केवल दुर्भाग्यपूर्ण है, बल्कि इस नीति के पीछे छिपे शिक्षा, सहिष्णुता और समरसता के मूल उद्देश्यों पर भी चोट करती है। लिहाजा इस बारे में सभी संबंधित पक्षों को विचार करना होगा

प्रतीकात्मक

हाल ही में महाराष्ट्र में त्रिभाषा नीति को लेकर उपजा विवाद यह दर्शाता है कि भाषा का प्रश्न भारत में केवल शैक्षिक नहीं, सांस्कृतिक और भावनात्मक भी है। हिंदी को तीसरी भाषा बनाने के सरकारी आदेश ने जहां कुछ वर्गों में राष्ट्रीय एकता की भावना को बल दिया, वहीं राज्य की क्षेत्रीय अस्मिता से जुड़े संगठनों ने इसे भाषाई वर्चस्व के रूप में देखा। यह एक ऐसा विषय है, जो भारत जैसे भाषिक विविधता वाले देश में गहरे विमर्श की मांग करता है। दरअसल त्रिभाषा नीति का मूल विचार यह है कि छात्र अपनी मातृभाषा या क्षेत्रीय भाषा के साथ-साथ हिंदी और अंग्रेजी- इन तीन भाषाओं का ज्ञान हासिल करें। इससे न केवल विद्यार्थियों को अधिक भाषाओं का व्यावहारिक लाभ मिलता है, बल्कि भारत जैसे विविधता भरे देश में सांस्कृतिक संवाद और एकता को भी मजबूती मिलती है। यही कारण है कि जब महाराष्ट्र सरकार ने पहली कक्षा से हिंदी को तीसरी भाषा के रूप में लागू करने की बात कही, तो वह एक स्वागत योग्य कदम था। लेकिन राजनीतिक दबाव के आगे यह प्रयास जिस तरह रुक गया, वह न केवल चिंताजनक है, बल्कि शिक्षा व्यवस्था में एक अवांछित हस्तक्षेप की तरह भी देखा जाना चाहिए।

त्रिभाषा नीति का पहला सबसे बड़ा फायदा यह है कि यह भाषाई समावेशिता को बढ़ावा देती है। कोई भी बच्चा जब अपने क्षेत्रीय परिवेश की भाषा के साथ-साथ भारत की एक संपर्क भाषा (हिंदी) और वैश्विक भाषा (अंग्रेजी) सीखता है, तो वह न केवल अपने राज्य का, बल्कि देश और दुनिया का भी हिस्सा बन जाता है। वह सीमाओं से ऊपर उठता है और संवाद की एक नई दुनिया उसके सामने खुलती है। क्या यह किसी राज्य की ताकत नहीं बन सकता कि उसके बच्चे तीन भाषाओं में दक्ष हों?

दूसरा लाभ यह है कि त्रिभाषा नीति छात्रों को बहुभाषी बनने की दिशा में प्रेरित करती है। विज्ञान और शोध से यह बात प्रमाणित है कि जो छात्र दो या तीन भाषाओं में दक्ष होते हैं, उनकी स्मृति क्षमता, समझने की शक्ति और तार्किक सोच अधिक तेज होती है। बहुभाषिता बच्चों में संवेदनशीलता, लचीलापन और सांस्कृतिक जागरूकता जैसे गुणों का विकास करती है। एक से अधिक भाषाओं में सोचना और सीखना बच्चों के दिमाग को ज्यादा व्यस्त और सक्रिय रखता है। वे नई अवधारणाओं को जल्दी पकड़ते हैं, और भाषा की विविधता के चलते उनके सोचने का दायरा व्यापक हो जाता है। अलग-अलग भाषाएं सीखने से बच्चों के भीतर विभिन्न दृष्टिकोणों को स्वीकार करने की क्षमता बढ़ती है। वे अधिक खुले दिमाग के होते हैं, और दूसरों की संस्कृति, भाषा और सोच को सम्मान देना सीखते हैं। महाराष्ट्र के लिए यह अवसर हो सकता था कि वह इस नीति को लागू कर एक उदाहरण प्रस्तुत करता।

जो युवा तीन भाषाओं में संवाद करने में सक्षम होते हैं, वे हर जगह प्रतिस्पर्धा में बेहतर स्थान पाते हैं। वे अनुवाद, पर्यटन, प्रशासन, शिक्षा और आइटी जैसे क्षेत्रों में अधिक अवसर प्राप्त करते हैं। यह सोचने वाली बात है कि जब भाषा के नाम पर रोजगार छिनने की आशंका से राजनीति होती है, तो वहीं त्रिभाषा नीति युवाओं को रोजगार में बढ़त दे सकती थी। जब एक मराठी बच्चा हिंदी भी जानता है और एक बिहारी बच्चा मराठी सीखता है, तो वे एक-दूसरे को नजदीक से समझते हैं। भाषा केवल अभिव्यक्ति नहीं, बल्कि संस्कृति की संवाहिका होती है। त्रिभाषा नीति भारतीय विद्यार्थियों को क्षेत्रीय, राष्ट्रीय और वैश्विक साहित्य के समृद्ध संसार से जोड़ती है।

त्रिभाषा नीति एक पुल बनाती है, जो भारत की विविधता को जोड़ने का काम करती है। यह एकता भारत की सबसे बड़ी पूंजी है, और इसे बनाए रखने के लिए शिक्षा में भाषाओं का मिश्रण आवश्यक है। एक बहुभाषी नागरिक पूरे भारत और अंतरराष्ट्रीय स्तर पर भी संवाद करने में सक्षम होता है। यह नीति व्यक्ति को बहुभाषिक बाजार की मांग के अनुरूप बनाती है, जिससे उसके सामने अवसरों की सीमा नहीं रहती।

भारतीय भाषाओं के संरक्षण का उपाय : त्रिभाषा नीति भारतीय भाषाओं के संरक्षण का एक दूरदर्शी उपाय है। वैश्वीकरण और अंग्रेजी के प्रभाव के चलते कई भारतीय भाषाएं हाशिए पर जा रही थीं। यह नीति सुनिश्चित करती है कि हर क्षेत्र की भाषाएं न केवल पढ़ाई में रहें, बल्कि उनका साहित्य, व्याकरण और मौखिक परंपराएं भी जीवंत बनी रहें। इस नीति के माध्यम से भारत अपने भाषाई धरोहर को नष्ट होने से बचाता है और उसे अगली पीढ़ी को सौंपता है।

भाषा केवल बोलने का माध्यम नहीं, बल्कि एक साफ्ट पावर भी है और त्रिभाषा नीति उसी साफ्ट पावर को वैश्विक मंच पर स्थापित कर सकती है। आज जब दुनिया वैश्विक नागरिकता की बात कर रही है, तब भारत को अपने नागरिकों को बहुभाषी बनाकर न केवल देश में संवाद का सेतु रचने की जरूरत है, बल्कि विश्व मंच पर उन्हें सक्षम भी बनाने की जिम्मेदारी उठानी चाहिए। त्रिभाषा नीति इसी दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम है। इसे राजनीति से ऊपर उठकर देखा जाना चाहिए।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति का त्रिभाषा फार्मूला हमें स्मरण कराता है कि शिक्षा वही सार्थक है, जो जड़ों से जुड़ी हो, हृदय से निकले और जीवन में उतर सके। इसलिए आवश्यकता इस बात की है कि शिक्षक, अभिभावक और नीति-निर्माता मिलकर इस नीति को केवल कागजी दस्तावेज न मानें, बल्कि इसे जीवन और कक्षा में उतारें। यही भारत को भाषाई, बौद्धिक और सांस्कृतिक रूप से एक नए युग में प्रवेश दिलाने की दिशा है एक ऐसा युग, जहां भाषा से बंटवारे नहीं, जुड़ाव और जागरूकता की लहरें उठें।

राजनीतिक स्वार्थ से जुड़ा है भाषा विवाद

भारत की ताकत उसकी भाषाई विविधता है, लेकिन जब यही विविधता असहिष्णुता में बदलने लगे, तो चिंता गहराने लगती है। महाराष्ट्र में मराठी के समर्थन में जिस प्रकार हिंसक रुझान सामने आए हैं, वह एक बड़े सवाल की ओर इशारा करते हैं कि क्या हम अब भाषाई सहिष्णुता से दूर होते जा रहे हैं? क्या भारत में अब भाषा की विविधता एकता की नहीं, टकराव की जननी बनती जा रही है? मराठी बनाम हिंदी की बहस दरअसल सतह पर भाषा की है, लेकिन भीतर से यह लड़ाई अवसरों की है जैसे रोजगार की, सत्ता की, और पहचान की। मुंबई और ठाणे जैसे इलाकों में जब हिंदी भाषियों का आगमन बढ़ा, तो स्थानीय युवाओं में यह भावना घर कर गई कि उनकी नौकरियां छिन रही हैं। ऐसे में भाषा एक प्रतीक बन गई- असुरक्षा की। क्या यह विवाद भाषा का है या रोजगार के असंतुलन का?

मुंबई हमेशा से एक ऐसा शहर रहा है जो बाहर से आए हर व्यक्ति को जगह देता रहा है- भाषा, जाति, धर्म की परवाह किए बिना। लेकिन मौजूदा घटनाएं चिंता बढ़ा रही हैं- क्या अब इस शहर को एक भाषा मराठी की सीमा में बांधा जा रहा है? यदि ऐसा है, तो यह न केवल मुंबई के आत्मा को चोट है, बल्कि भारत के सबसे समावेशी शहर को सीमित सोच में ढालने की कोशिश है। दिल्ली, उत्तर प्रदेश और बिहार के लोग महाराष्ट्र में दशकों से रहते आए हैं, लेकिन मौजूदा विवाद ने उन्हें यह सोचने पर मजबूर कर दिया है कि क्या अब उन्हें वहां अपना कहलाने के लिए लड़ना पड़ेगा? स्थानीय युवाओं को लगता है कि बाहरी लोग अधिक मेहनती हैं, अधिक हुनरमंद हैं, और यही डर धीरे-धीरे भाषा के शक्ल में जुबान पर आ गया है। उन्हें लगता है कि उनकी मराठी केवल दीवारों पर बची है, और नौकरियां हिंदी बोलने वाले ले जा रहे हैं। यह असुरक्षा कहीं गहरी है, जिसे केवल भाषाई आंदोलन कह देना आसान है, लेकिन पूरी सच्चाई नहीं।

भारतीय लोकतंत्र का आत्मा उसकी भाषाई, धार्मिक और सांस्कृतिक विविधता में बसता है। यह वही देश है जहां संविधान हर नागरिक को अपनी भाषा, विचार और अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता देता है बिना किसी भेदभाव के। लोकतंत्र की खूबसूरती विविध मत, विचार और भाषा में है। लेकिन जब किसी एक भाषा को गौरव का प्रतीक बनाकर बाकी भाषाओं को दोयम दर्जा दिया जाए, तो यह लोकतंत्र की जड़ों को कमजोर करता है। महाराष्ट्र में मराठी गौरव के नाम पर जो हिंसा हो रही है और धमकी दी जा रही है, वह लोकतंत्र नहीं, भाषाई तानाशाही का चेहरा है। असली गौरव तब है जब हर नागरिक, हर भाषा को बराबर माना जाए।

पिछले कुछ वर्षों में मुंबई और पुणे जैसे महानगरों में वैश्विक कारपोरेट संस्कृति के प्रसार और शिक्षा के प्रसार ने मराठी और हिंदी भाषियों के बीच संवाद और समझ को बढ़ाया है, लेकिन राजनीति में यह मुद्दा आज भी जीवित है। यह विवाद समय-समय पर राजनीतिक दलों द्वारा वोटबैंक की राजनीति के तहत फिर से उछाला जाता है। इस पृष्ठभूमि को समझे बिना हम महाराष्ट्र की भाषा नीति या सामाजिक समरसता के प्रयासों को सही परिप्रेक्ष्य में नहीं देख सकते।

मराठी बनाम हिंदी विवाद को राजनीति ने अनावश्यक रूप से उभारा है। हमें यह समझना चाहिए कि भाषाएं सांस्कृतिक धरोहर हैं, न कि सियासी हथियार। दोनों भाषाओं को समान सम्मान देना होगा, ताकि सामाजिक सद्भाव बना रहे। हमें समझना होगा कि भाषा का उद्देश्य संवाद है, न कि विवाद। मराठी और हिंदी दोनों को एक-दूसरे के पूरक के रूप में देखा जाना चाहिए। स्कूलों में हिंदी को अनिवार्य करने से पहले स्थानीय समुदायों की राय लेनी चाहिए थी। सरकार को मराठी और हिंदी दोनों का सम्मान करते हुए एक ऐसी नीति बनानी चाहिए जो दोनों को साथ लेकर चले। मराठी बनाम हिंदी विवाद को सुलझाने के लिए एक समावेशी दृष्टिकोण अपनाना होगा, जिसमें दोनों भाषाओं को बिना किसी भेदभाव के बढ़ावा दिया जाए।

(कैलाश विश्नोई)

फिर से

बुजुर्गों की सेवा

आजकल एक रीति चल पड़ी है कि बुजुर्ग बीमार हुए तो उन्हें अस्पताल ले जाओ, आइसीयू में भर्ती करो और फिर जैसा जैसा डाक्टर कहता जाए, मानते जाओ। और अस्पताल के हर डाक्टर, कर्मचारी के सामने कहते हैं- पैसे की चिंता मत करिए, बस इनको ठीक कर दीजिए। डाक्टर एवं अस्पताल कर्मचारी लगे हाथ आपके मेडिकल ज्ञान को भी परख लेते हैं और फिर आपके भावनात्मक रुख को देखते हुए खेल आरंभ होता है। कई तरह की जांचें होने लगती हैं, फिर रोज रोज नई नई दवाइयां दी जाती हैं, रोग के नए नए नाम बताए जाते हैं और आप सोचते हैं कि बहुत अच्छा इलाज हो रहा है। 80 साल के बुजुर्ग के हाथों में सुइयां घुसी रहती हैं, बेचारे करवट तक नहीं ले पाते। आइसीयू में मरीज के पास कोई रुक नहीं सकता या बार बार मिल नहीं सकते। दवाइयों के परीक्षण की प्रयोगशाला बन जाता है 80 वर्षीय शरीर। आप ये सब क्या कर रहे हैं एक शरीर के साथ?

जबकि शरीर, आत्मा, मृत्युलोक, परलोक की अवधारणा बताने वाले धर्म की मान्यता है कि ज्ञात मृत्यु सदा सुखद परिस्थिति में होने, लाने का प्रयत्न करना चाहिए। इसलिए ग्रामीण क्षेत्रों में बुजुर्ग जब अंतिम अवस्था में घर में होते हैं तो जिन लोगों को वो अंतिम समय में देखना चाहते हैं, अपना वंश, अपना परिवार, वो सब आसपास रहते हैं। बुजुर्ग की कुछ इच्छा है खाने की तो तुरंत उन्हें दिया जाता है, भले ही वह थोड़ा सा ही खा पाएं। लेकिन मन की इच्छा पूरी होना आवश्यक है, आत्मा के शरीर छोड़ने से पहले। अस्पताल के आइसीयू में क्या ये संभव होता है? इन सबके बारे में भी सोच-विचार करना आवश्यक है। एक उम्र के बाद जब बीमारी में सुधार असंभव प्रतीत हो तो अपना घर ही सबसे बेहतर माना जाता है।

इसलिए यदि आप थोड़ा सा भी उनके प्रति संवेदनशील हों, तो बुजुर्ग को देवलोक गमन का शरीर मानकर उनकी सेवा में लग जाइये। अस्पताल और मेडिकल सिस्टम के भरोसे छोड़ देना ठीक नहीं है। अन्यथा एक समय के बाद आपको स्वयं इसका मलाल हो सकता है। यदि आपसे सेवा नहीं होती तो नर्स को घर में रखिए, घर में सभी सुविधाएं देने का प्रयत्न कीजिए।

(राजीव कुमार की फेसबुक वाल से संपादित अंश, साभार)

X पोस्ट

एअर इंडिया विमान हादसे पर बीबीसी की प्रस्तुति देखने के बाद यही लगता है कि उसे अपना नाम बदलकर- बोइंग बचाओ कारपोरेशन कर लेना चाहिए।
प्रियंका चतुर्वेदी@priyankac19

चुनाव आयोग के सूत्रों के अनुसार बिहार में एसआइआर के दौरान घर-घर सर्वेक्षण के समय बीएलओ को बड़ी संख्या में नेपाल, बांग्लादेश और म्यांमार के लोग मिले हैं। इन लोगों ने तमाम आवश्यक भारतीय दस्तावेज भी प्राप्त कर लिए हैं। जांच के बाद यदि यह तथ्य सही पाया जाता है तो ऐसे नामों को अंतिम मतदाता सूची में शामिल नहीं किया जाएगा।
अखिलेश शर्मा@akhileshsharma1

टेनिस के मौजूदा दिग्गज कार्लोस अलकराज के सरनेम की जड़ें मोरक्को से जुड़ी हैं। अरबी में अल-कराज शब्द का अर्थ है कृषि से समृद्ध भूमि। दूसरी ओर, इतालवी सितारे जानिक सिनर के सरनेम का उद्भव जर्मनी से है और उनकी मातृभाषा भी जर्मन है। खेलों में भी संस्कृतियों का अद्भुत संगम दिखता है।
जोय भट्टाचार्य@joybhattacharj

जागरण जनमत कल का परिणाम

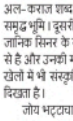

अहमदाबाद विमान हादसे की जांच रपट पर पायलटों के संगठन की आपत्ति सही है?

सभी आंकड़े प्रतिशत में।

आज का सवाल

क्या बिहार की मतदाता सूची में विदेशियों की मौजूदगी का संकेत राष्ट्रीय सुरक्षा के लिए खतरा है।

परिणाम जागरण इंटरनेट संस्करण के पाठकों का मत है।

जनपथ

झरते मुखारविंद से जब उनके अपशब्द,
पत्रकार भी आजकल हो जाते निःशब्द।
हो जाते निःशब्द तर्क मत उनसे करिए,
संस्कार से हीन रहे जो उससे डरिए।
यदि बचपन में वधु पढ़ाई भी कुछ करते,
तो गंधीले फूल भला क्यूं मुंह से झरते!
- ओमप्रकाश तिवारी

अजय जायसवाल
राज्य ब्यूरो प्रमुख, उत्तर प्रदेश

उत्तर प्रदेश डायरी

पर्यावरण संरक्षण में सियासत का 'प्रदूषण'

अनियमित मौसम, प्राकृतिक आपदाएं और प्रदूषण। इनके दुष्प्रभावों से कोई अछूता नहीं है। ऐसे में देश-दुनिया के साथ ही उत्तर प्रदेश में भी पर्यावरण संरक्षण के तहत साल-दर-साल करोड़ों पौधे लगाने की मुहिम चल रही है। सत्ता में रहते सपा, बसपा से लेकर वर्तमान भाजपा सरकार तक में लक्ष्य से बढ़कर पौधारोपण होता रहा है। वैसे तो पौधारोपण जैसे अभियान में सबका योगदान होना चाहिए, लेकिन राजनीतिक दलों के बीच प्रदूषण पर अंकुश से लेकर पर्यावरण संरक्षण की मुहिम में भी सियासत का प्रदूषण दिखाई दे रहा है। इसमें कोई पीछे नहीं, भले ही विपक्ष में बैठी सपा हो या फिर सरकार चला रही भाजपा।

प्रदेश की सियासत में प्रदूषण की समस्या और पर्यावरण संरक्षण की जरूरत कभी बड़ा मुद्दा नहीं रही और इस काम से राजनीतिक दलों का कोई वोट बैंक भी सीधे तौर पर प्रभावित नहीं होता। इसके बाद भी राजनीतिक वार-पलटवार का सिलसिला केवल स्वयं के काम को हकीकत और दूसरे के काम को दिखावा बताने के लिए चल रहा है। योगी आदित्यनाथ सरकार ने पिछले सप्ताह रिकार्ड पौधारोपण के नाम पर अपनी पीठ ठोकी तो सपा प्रमुख अखिलेश यादव ने आंकड़ों पर ही प्रश्न खड़े करने में देर नहीं की। फिर क्या था, मुख्यमंत्री योगी से लेकर सरकार के मंत्री तक ने सपा पर जमकर निशाना साधा और अखिलेश सरकार के कार्यकाल की तमाम कमियां गिना डालीं।

योगी सरकार ने इस बार वन महोत्सव में नौ जुलाई को 37 करोड़ से ज्यादा पौधे रोपकर नया रिकार्ड बनाया। मुख्यमंत्री योगी आदित्यनाथ से लेकर उप मुख्यमंत्री, मंत्री और वरिष्ठ अफसर तक जिलों-जिलों में पौधे लगाने पहुंचे। पौधारोपण के नए रिकार्ड के बीच सपा प्रमुख ने पौधारोपण की पूरी मुहिम को ही शक के कठघरे में खड़ा कर दिया। अखिलेश ने कहा कि पौधारोपण भाजपा का एक और इवेंट है। हमने एक बार पेड़ लगाए थे, एक हजार एकड़ भूमि में 1.24 लाख पेड़ लगते हैं। ये तो अब तक 200 करोड़ से ज्यादा पौधे लगाने का दावा कर रहे हैं, लेकिन इतनी जमीन कहां है? उन्होंने अपने काम की तारीफ करते हुए कहा, 'सपा सरकार में पारिजात, बरगद के पेड़ लगाए गए थे। मौसमी फल के पौधे लगाए गए थे। आगरा-लखनऊ एक्सप्रेस-वे के किनारे पेड़ लगे हैं। भाजपाई नकल करते हैं, पर अच्छा काम नहीं कर पाते। हम लोगों ने अपने कार्यकाल में 50 करोड़ पेड़ लगाने का लक्ष्य रखा था, उसकी ही नकल ये कर रहे हैं।'

अयोध्या स्थित त्रिवेणी वाटिका में बरगद का पौधा रोपते योगी आदित्यनाथ। जागरण

सपा प्रमुख का बयान आने के बाद मुख्यमंत्री योगी ने तीखा पलटवार किया। योगी ने कहा, 'वह एक दिन में 37 करोड़ पौधारोपण के अभियान पर भी सवाल उठाते हैं, जबकि इन प्रश्न करने वालों को जब अवसर मिला तो उन्होंने कुछ नहीं किया। योजनाओं को लूटपाट और भ्रष्टाचार का केंद्र बनाया। हमारी सरकार ने वन डिस्ट्रिक्ट वन प्रोडक्ट दिया, वन डिस्ट्रिक्ट वन क्राप दिया, जबकि सपा, कांग्रेस और बसपा की सरकारों ने वन डिस्ट्रिक्ट-वन माफिया दिया। परिवारवाद के नाम पर समाज में जहर घोलने का काम किया। पूर्व की सरकारों में वन माफिया जंगलों की अवैध कटान कराते थे, खनन माफिया अवैध खनन कराते थे।' उन्होंने कहा कि पौधारोपण अभियान केवल पौधारोपण करने का ही कार्य नहीं है, बल्कि यह वर्तमान को संजोने और भविष्य को बचाने का अभियान है। प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी के मार्गदर्शन में देश और प्रदेश में वनाच्छादन बढ़ा है।

योगी ने बाकायदा आंकड़े पेश करते हुए कहा कि वर्ष 2017 तक प्रदेश में पांच वर्षों के दौरान केवल 26 करोड़ पौधे लगे थे और उनका भी कहीं अता-पता नहीं था, जबकि हमारी सरकार ने आठ साल में 204 करोड़ पौधे लगाए। राष्ट्रीय-अंतरराष्ट्रीय संस्थाओं के सर्वेक्षण में इनमें से 75 प्रतिशत पौधे जीवित भी हैं। देश के किसी एक राज्य में पौधारोपण में उत्तर प्रदेश की भूमिका अग्रणी है। इसी का परिणाम है कि वर्ष 2017 के बाद प्रदेश में पांच लाख एकड़ क्षेत्र में पौधारोपण किया जा चुका है। भाजपा प्रदेश अध्यक्ष रहे जलशक्ति मंत्री स्वतंत्र देव सिंह ने भी सपा प्रमुख को घेरते हुए हमला बोला। उन्होंने कहा, 'अखिलेश की राजनीति झूठ और पाखंड पर टिकी है, चाहे वह पर्यावरण की बात हो या शिक्षा व्यवस्था की।' एक पेड़ मां के नाम अभियान को लेकर कहा कि आप माताओं का अपमान कर रहे हैं। उन्होंने याद दिलाया कि काशी में सफाई का अभियान प्रधानमंत्री मोदी के आने के बाद चला, जहां आज लोग बैठते हैं, घूमते हैं और पूरी दुनिया सराहना कर रही है।

वर्ष 2017 में सूबे की सत्ता गंवाने वाली सपा और सत्ताधारी भाजपा के साथ ज्यादातर मुद्दों पर चल रहे वार-पलटवार के खेल की अब जनता भी अभ्यस्त हो चुकी है। राजनीतिक और अन्य मुद्दों पर इस तरह के टकराव पर समर्थन-विरोध की प्रतिक्रियाएं भी सामने आती हैं, लेकिन पौधारोपण जैसे काम में दोनों दलों की सियासी जंग से कम से कम मतदाताओं में तो अच्छा संदेश जाता नहीं दिखाई दिखा। बहरहाल, सियासी दलों पर इससे कोई फर्क पड़ने वाला नहीं, क्योंकि विधानसभा चुनाव आते-आते बयानों का यह टकराव, घमासान में तब्दील होना ही है।

छत्तीसगढ़ डायरी

सतीश चंद्र श्रीवास्तव
संपादकीय प्रभारी, रायपुर

विधानसभा में टकराव के आसार

विधानसभा का मानसून सत्र आज से शुरू होने जा रहा है। महत्वपूर्ण विधेयकों के पारित होने की उम्मीद के साथ पक्ष-विपक्ष के आक्रामक व्यवहार की भी परिस्थितियां निर्मित हो चुकी हैं। भाजपा के सभी विधायकों को अंबिकापुर के मैनपाट में पिछले सप्ताह ही प्रशिक्षित किया गया है। उद्घाटन सत्र में राष्ट्रीय अध्यक्ष जगत प्रकाश नड्डा भी पहुंचे। वहीं कांग्रेस के राष्ट्रीय अध्यक्ष मल्लिकार्जुन खरगे ने रायपुर में सभा कर आक्रामक विपक्ष की भूमिका निभाने का आह्वान किया। गुटों में बंटी कांग्रेस ने मुद्दे तो गिनाए हैं, परंतु भाजपा ने कांग्रेसियों के भ्रष्टाचार को ही सत्र में मुख्य हथियार बनाने के संकेत दिए हैं।

आने वाले दिनों में यह देखा जाना है कि पिछले सत्र में भ्रष्टाचार के मामलों में कार्रवाई की धीमी गति पर प्रश्न खड़े कर चुके नेता प्रतिपक्ष डा. चरणदास महंत के 'लाठी लेकर विधानसभा पहुंचने' की बात केवल मजाक ही थी या कुछ विशेष भी होगा। पिछले डेढ़ वर्षों में बिजली दरों में चौथी बार वृद्धि को कांग्रेस ने प्रमुख मुद्दा बनाने का निर्णय लिया है। इसके लिए प्रदेश के विभिन्न हिस्सों में चरणबद्ध आंदोलन की घोषणा भी की गई है। सरकार के सामने सबसे बड़ी चुनौती खाद-बीज की कमी से जुड़े प्रश्नों का उत्तर देना होगा। प्रदेश के 10 हजार से अधिक स्कूलों में शिक्षकों के युक्तियुक्तकरण के बाद शिक्षकों की नियुक्ति से संबंधित समस्या का कुछ स्तर तक समाधान तो हुआ है, परंतु समय से पुस्तकों का नहीं पहुंच पाना और स्कूलों की ढांचागत स्थिति भी विपक्ष के लिए आक्रमकता का विषय होगा।

इधर कांग्रेस के लिए मुश्किल यह है कि भ्रष्टाचार का मुद्दा उनके ही नेताओं के लिए दोधारी तलवार का काम करने लगता है। इनमें ताजा प्रकरण भारतमाला परियोजना में जमीन अधिग्रहण से जुड़ा है। नेता प्रतिपक्ष डा. महंत प्रदेश में कांग्रेस के शासनकाल में हुए इस घोटाले की जांच सीबीआइ से कराना चाहते हैं और ईओडब्ल्यू की जांच से संतुष्ट नहीं हैं। यहीं से पूर्व मुख्यमंत्री भूपेश बघेल को घेरने वाले आबकारी, कोयला परिवहन, आनलाइन सट्टा, डीएमएफ आदि घोटालों के मामले भी उछल जा रहे हैं। सत्ता पक्ष के नेता ही प्रश्न करने लगे हैं कि संरक्षक की गिरफ्तारी कब होगी। गुटों में बंटी कांग्रेस पिछले सप्ताह एक साथ 22 आबकारी अधिकारियों के निलंबन से भी स्तब्ध है। आबकारी घोटाले का आकार 2,100 करोड़ से बढ़कर 3,200 करोड़ हो गया है। नेता प्रतिपक्ष की तरफ से भ्रष्टाचार के मामलों में ठोस कार्रवाई नहीं होने का आरोप उनकी ही पार्टी के नेताओं को बेचैन और उग्र कर रहा है। कांग्रेस ने किसानों और आदिवासियों से जुड़े मुद्दों के साथ ही शिक्षा और स्वास्थ्य से जुड़े विषयों को भी विधानसभा में उठाने की रणनीति बनाई है। इसके अतिरिक्त महतारी वंदन, राशन और सब्सिडी वितरण में गड़बड़ी सहित विभिन जनकल्याणकारी योजनाओं के कार्यान्वयन में गड़बड़ी पर सरकार को घेरने की तैयारी का दावा किया जा है।

इधर भाजपा के विधायकों ने सीधे भूपेश बघेल को ही निशाने पर ले लिया है। इसके लिए डिजिटल मीडिया को हथियार बनाया गया है। ऐसे कार्टून प्रसारित किए जा रहे हैं जिनमें कांग्रेस नेतृत्व के सामने अपने कार्यकाल में हुए घोटाले को छुपा लेने की ही गंभीर चुनौती खड़ी हो। प्रदेश अध्यक्ष दीपक बैज, नेता प्रतिपक्ष डा. चरणदास महंत, पूर्व मुख्यमंत्री भूपेश बघेल और पूर्व उप मुख्यमंत्री टीएस सिंहदेव की गुटबाजी उभर रही हो। प्रदेश प्रभारी सचिन पायलट की उपस्थिति में हुए विवाद का प्रभाव मानसून सत्र में भी दिखना सुनिश्चित माना जा रहा है। भाजपा को उम्मीद है कि विपक्ष की गुटबाजी ही उसके लिए राह आसान बनाएगी, परंतु सत्ताधारी पार्टी को यह भी पता है कि विपक्ष के कुछ नेता किसी भी हद तक जाने की स्थिति में है।

भाजपा के प्रशिक्षण शिविर के उद्घाटन सत्र में जेपी नड्डा (बाएं से तीसरे) समेत अन्य नेता। भाजपा

मानसून सत्र में प्रदेशवासियों को छत्तीसगढ़ जन विश्वास विधेयक पारित होने की उम्मीद है, परंतु मतांतरण रोकने के लिए संबंधित विधेयक के लिए अभी और इंतजार करना होगा। उप-मुख्यमंत्री विजय शर्मा ने इस संबंध में कहा है कि विधेयक का प्रारूप और प्रविधान तैयार है, परंतु विभिन्न विभागों के बीच चर्चा नहीं हो पाने के कारण इसमें विलंब हो रहा है। विपक्ष इस विधेयक में देरी पर प्रश्न खड़ा कर रहा है और प्रदेश में हाल के दिनों में बढ़े मतांतरण के मामलों के लिए अनिर्णय को जिम्मेदार भी बता रहा है। उम्मीद की जा रही है कि किसानों और कर्मचारियों के साथ ही शिक्षा, स्वास्थ्य और प्रशासनिक सुधारों से संबंधित अन्य प्रस्तावों को भी विधानसभा से स्वीकृति मिलेगी। इन सबके बीच भ्रष्टाचार के मामलों ने मुख्यमंत्री विष्णुदेव साय की बिना किसी संकोच के ठोस निर्णय लेने प्रवृत्ति के भी सदन में प्रभावशाली तरीके से सामने आने की उम्मीद की जा रही है।

****

दैनिक जागरण
सच अधिक समय तक नहीं छिपता

फर्जी वोटर

बिहार में मतदाता सूची के सत्यापन के दौरान चुनाव आयोग के प्रतिनिधियों को ऐसे संकेत मिलना गंभीर चिंता का विषय है कि राज्य में नेपाल, बांग्लादेश और म्यांमार के लोग भी मतदाता बन गए हैं। यह केवल चुनाव प्रक्रिया से ही खिलवाड़ नहीं, राष्ट्रीय सुरक्षा के लिए भी खतरनाक बात है। चिंता की बात यह है कि ऐसे लोगों की संख्या लाखों में हो सकती है। नेपाल, बांग्लादेश और म्यांमार के लोगों ने आधार, राशन कार्ड जैसे दस्तावेज भी हासिल कर रखे हैं। इसके बाद तो उन्हें मतदाता के रूप में दर्ज होने से रोका ही नहीं जा सकता था। यह अच्छा हुआ कि चुनाव आयोग ने तय किया कि सघन पुनरीक्षण कर ऐसे लोगों के नाम मतदाता सूची से हटाए जाएंगे। यह आवश्यक ही नहीं अनिवार्य भी है। इतना ही अनिवार्य यह भी है कि चुनाव आयोग ने देश भर में मतदाता सूची के सत्यापन का जो अभियान चलाने का निर्णय लिया, उस पर अडिग रहे। यह स्पष्ट ही है कि विपक्षी दल ऐसे किसी अभियान पर हायतौबा मचाएंगे और चुनाव आयोग के मोदी सरकार के इशारे पर काम करने एवं लोकतंत्र से खिलवाड़ करने के बेतुके आरोप लगाएंगे। बिहार के मामले में चुनाव आयोग के फैसले पर आपत्ति जताकर विपक्षी दलों ने खुद को बेनकाब कर लिया है। वे लोगों को बरगलाने के लिए कुछ भी कहें, सच यह है कि उन्होंने यह जता दिया कि वे पुरानी और खामियों से लैस मतदाता सूचियों के सहारे चुनाव कराना चाहते हैं। पता नहीं कैसे और क्यों वे इस नतीजे पर पहुंच गए कि जो वैध मतदाता नहीं हैं, वे उनके वोटर ही हैं? देश भर में मतदाता सूचियों के पुनरीक्षण के क्रम में बिहार जैसे मामले अन्य राज्यों में भी देखने को मिल सकते हैं।

चुनाव आयोग पड़ोसी देशों और विशेष रूप से बांग्लादेश, म्यांमार आदि से अवैध रूप से आए और भारत में बस गए एवं मतदाता बन गए लोगों के नाम तो मतदाता सूची से हटा सकता है, लेकिन ऐसे लोगों के खिलाफ कोई ठोस कार्रवाई केंद्रीय गृह मंत्रालय ही कर सकता है। उसे यह काम प्राथमिकता के आधार पर करना चाहिए। भारत कोई धर्मशाला नहीं कि दूसरे देशों से लोग घुसपैठियों अथवा शरणार्थियों के रूप में आएं और फिर अनुचित तरीके से तरह-तरह के दस्तावेज हासिल कर यहां के मतदाता भी बन जाएं। ऐसे तमाम लोग पश्चिम बंगाल, असम आदि राज्यों में मतदाता अर्थात भारतीय नागरिक बन भी चुके हैं। यह भी किसी से छिपा नहीं कि बांग्लादेश और म्यांमार से घुसपैठ हो रही है। इस घुसपैठ पर कई राज्य सरकारें न केवल आंखें मूंदे हुई हैं, बल्कि घुसपैठियों को अपना वोटर बनाने पर आमादा हैं। यदि केंद्र सरकार राष्ट्रीय नागरिकता रजिस्टर-एनआरसी लागू नहीं करती तो भी उसे घुसपैठ के खिलाफ सख्त होना ही होगा।

कर्मचारियों पर हमला

पर्यावरण की सुरक्षा और प्रकृति के संरक्षण के लिए नियम और कानून बनाए गए हैं। प्रकृति पर मानव जीवन निर्भर है। इनका पालन सुनिश्चित करने के लिए संबंधित विभागों में विशेष शाखाएं भी हैं, लेकिन हिमाचल प्रदेश में वन माफिया, खनन माफिया और भूमाफिया सक्रिय हैं, जो इन अमूल्य धरोहरों को लूट रहे हैं। इनका दुस्साहस इस हद तक बढ़ गया है कि वे सरकारी अधिकारियों और कर्मचारियों पर हमले करने से भी नहीं चूक रहे हैं। प्रदेश के सीमावर्ती जिलों में वन और खनन माफिया के हमले लगातार हो रहे हैं। अब मंडी जिले के सुंदरनगर क्षेत्र में वनरक्षक और वन मित्र पर अवैध कटान की शिकायत करने पर हमला किया गया। वनरक्षक ने मारपीट और वर्दी फाड़ने का आरोप लगाया है। कुछ समय पहले ऊना जिले में एक टिप्पर से पुलिस टीम को कुचलने का प्रयास किया गया था, जबकि सोलन जिले में एक वरिष्ठ प्रशासनिक अधिकारी को भी गाड़ी से कुचलने की कोशिश की गई थी। चिंताजनक है कि कानून सख्त होने के बावजूद माफिया बेखौफ है। सरकार को ऐसे मामलों में कठोर कदम उठाने की आवश्यकता है। स्थानीय लोगों को भी माफिया के खिलाफ आवाज उठानी होगी। उन्हें समझना होगा कि इन अवैध गतिविधियों से न केवल पर्यावरण प्रभावित होगा, बल्कि सबसे अधिक नुकसान उन्हें ही उठाना पड़ेगा। सरकार से अपेक्षा है कि माफिया के खिलाफ कड़ी कार्रवाई की जाए ताकि भविष्य में कोई भी इस तरह का दुस्साहस न कर सके।

माफिया के हौसले हर दिन बढ़ रहे हैं, इन पर सख्त कार्रवाई की आवश्यकता है

जरूरी सवालों की अनदेखी करती रिपोर्ट

मार्क डी. मार्टिन

एअर इंडिया विमान हादसे की आरंभिक जांच रिपोर्ट पहली नजर में ही पूर्वाग्रह से ग्रस्त दिखती है। इसमें पूरा दोष पायलटों पर मढ़ने का प्रयास हुआ है

अहमदाबाद में दुर्घटनाग्रस्त एअर इंडिया के विमान की आरंभिक जांच रिपोर्ट जवाब से कहीं अधिक सवाल उठाने वाली है। अहमदाबाद से लंदन के लिए जा रही उड़ान संख्या एआइ 171 की दुर्घटना से जुड़ी यह रिपोर्ट पहली नजर में ही पूर्वाग्रह से ग्रस्त दिखती है। इसमें किसी न किसी तरह पूरा दोष उन पायलटों पर मढ़ने का प्रयास है, जो इस हादसे में मारे गए। तथ्यात्मक रूप से रिपोर्ट यही बताती है कि टेक आफ यानी उड़ान भरते समय इंजन बंद हो गए थे। ऐसी स्थिति में रैट-रैम एयर टरबाइन स्वाभाविक रूप से सक्रिय हो जाता है। रैट असल में एक आपातकालीन उपकरण है, जो विमान के दोनों इंजनों के बंद होने की स्थिति में आवश्यक ऊर्जा प्रदान करता है। इसमें विमान की गति से चलने वाली हवा के उपयोग से ही ऊर्जा उत्पन्न होती है। रैट फ्यूल स्विच/वाल्व को कट आफ करने की स्थिति में सक्रिय नहीं होता। वैसे भी पायलट इतने मूर्ख नहीं होते कि दोनों इंजनों के फेल हो जाने की स्थिति में फ्यूल को कट आफ कर दें। फ्यूल कट आफ का तर्क तभी गले उतरता है, जब अंतिम उपाय के रूप में अपनी जान बचाने के लिए पायलट इंजनों को दोबारा चालू करने का प्रयास करते हैं।

प्रारंभिक जांच रिपोर्ट में चालक दल की आपसी बातचीत को लेकर रहस्य बुनने की मंशा भी बहुत चौंकाने वाली है। यह असंभव सी बात है कि ऐसी आपात स्थिति के दौरान काकपिट में कोई हलचल न हुई हो। ऐसी परिस्थितियों में वहां इतनी शांति कैसे हो सकती है। जाहिर है कि कुछ पहलुओं को जानबूझकर छिपाने का प्रयास किया जा रहा है। जिस तरह रिपोर्ट लिखी गई है उसका भाव यही संकेत करता है कि यह कुछ और नहीं, बल्कि विमान दुर्घटना के लिए पायलटों को दोषी ठहराने का गुप्त प्रयास है। इसके अलावा यह भी समझ से परे है कि जब जांच के किसी ठोस नतीजे पर पहुंचने में अभी और तीन माह से लेकर एक साल तक का समय लग सकता है तो फिर बोइंग एवं इंजन बनाने वाली कंपनी जीई को क्यों संदेह के दायरे से दूर रखा जा रहा है? फिर इस जांच रिपोर्ट को रात करीब दो बजे जारी करने का क्या तुक, जब इस दुर्घटना से सर्वाधिक प्रभावित भारत और ब्रिटेन जैसे देशों में कामकाज करीब-करीब बंद हो जाता है।

पायलट, सेफ्टी मैनेजमेंट सिस्टम और उससे जुड़े पेशेवरों के अलावा आडिटर और जांचकर्ताओं के लिए किसी उड़ान के दो सबसे महत्वपूर्ण पड़ाव टेक आफ और लैंडिंग होते हैं। इस दौरान पूरा ध्यान विमान को करीब 2000 फीट तक मैनुअली उड़ाने पर होता है, जिसके लिए हाथ से ही सभी उपकरणों को चलाना पड़ता है। उसके बाद ही विमान आटो-पायलट की अवस्था में आ सकता है। थ्रस्ट सेटिंग भी मैनुअल होती है और इस कवायद में पूरा फोकस विमान से जुड़ी अहम नियंत्रक प्रणालियों पर होता है।

अंतिम रिपोर्ट से ही स्पष्ट हो सकेगी विमान हादसे की तस्वीर ● फाइल

चूंकि यह रिपोर्ट एक व्यापक परिचालन वाले बोइंग 787 ड्रीमलाइनर विमान से जुड़ी है तो पूरी दुनिया के लिए उसके गहरे निहितार्थ हैं। रिपोर्ट में उल्लेख किया गया है कि फ्यूल वाल्व-स्विच कट आफ यानी निष्क्रिय कर दिए गए थे। इसके दूर-दूर तक कोई आसार नहीं दिखते कि कोई भी पायलट विशेष रूप से टेक आफ के दौरान और जब उसे सबसे अधिक थ्रस्ट की जरूरत होगी, तब वह फ्यूल स्विच से कोई छेड़छाड़ करेगा। इस दौरान अमूमन काकपिट के फ्रंट पैनल में लगे लैंडिंग गीयर उठाने या फ्लैप्स उठाने पर जोर रहता है। ऐसे में अगर फ्यूल वाल्व-स्विच को कट आफ स्थिति में ले जाने के लिए वापस मोड़ने की वजह बताई जाए तो यह गहन जांच का विषय है।

फ्यूल वाल्व/स्विच पर संकेतक होता है कि इसमें विसंगति हो सकती है। अमेरिका के संघीय विमानन प्रशासन-एफएए ने यह माना भी है। एफएए ने 2018 में वायु परिवहन के मोर्चे पर एक चेताने वाले बुलेटिन में कहा था कि कुछ ऐसे मामले में सामने आए हैं, जिनमें फ्यूल स्विच अपने आप ही कट आफ स्थिति में चला गया। इनमें जापान और यूरोपीय विमानन सेवाओं से जुड़े मामलों का संदर्भ भी था। मेरे विचार में अगर स्विच में कोई खराबी थी तो यही दुर्घटना का सबसे संभावित कारण हो सकता है। ऐसे में एनटीएसबी, एफएए, ईएएसए के अलावा एएआइबी जैसी एजेंसियों को यह जांचने-परखने की जरूरत है कि फ्यूल स्विच क्यों कट आफ अवस्था में चले गए, क्योंकि कोई पायलट ऐसी मूर्खता नहीं करेगा कि उड़ान के जिस पड़ाव पर उसे सबसे अधिक ऊर्जा की जरूरत हो तो वह उसके स्रोत को ही बंद कर दे।

उचित होगा कि हम समग्र एवं व्यापक जांच रिपोर्ट के सामने आने की प्रतीक्षा करें। एआइ 171 उड़ान हादसे से जुड़ी आरंभिक रिपोर्ट पर गौर करें तो यदि फ्यूल कट आफ स्विच अपने आप ही हरकत में आ गए तो यह उन तमाम विमानन कंपनियों के लिए सतर्कता बढ़ाने का समय है, जो ड्रीमलाइनर 787 विमानों से परिचालन कर रही हैं। उन्हें फ्यूल स्विच प्रणालियों की सघन समीक्षा और व्यापक जांच-पड़ताल करनी होगी। बोइंग 787 ड्रीमलाइनर व्यापक डिजिटल एवं साफ्टवेयर प्रणाली पर संचालित विमान है, जिसे निरंतर रूप से सिस्टम अपडेट एवं सिक्योरिटी पैच की भी आवश्यकता होती है। अगर फ्यूल स्विच कट आफ हो गए तो इसके पीछे के कारण को तलाशना होगा। स्वाभाविक तौर पर इसमें तमाम जटिलताएं आएंगी, लेकिन इस काम को पूरा करने की प्रक्रिया में सभी जांच एजेंसियों को कोई कोर-कसर शेष नहीं रखनी चाहिए। यह भी उतना ही महत्वपूर्ण होगा कि इस जांच के दायरे में उन अन्य अनेक कंपनियों और नियामकों को भी जोड़ना चाहिए, जो 787 विमानों के परिचालन से जुड़े हैं।

(लेखक विमानन विशेषज्ञ एवं मार्टिन कंसल्टिंग के सीईओ हैं)

response@jagran.com

आर्थिकी के लिए चुनौती बने बैंकिंग फ्राड

डा. ब्रजेश कुमार तिवारी

बैंकिंग धोखाधड़ी का असर वित्तीय नुकसान तक सीमित नहीं होता। ये मामले बैंकों में जनता का भरोसा भी घटाते हैं

आरबीआइ द्वारा हाल में जारी किए बैंकिंग धोखाधड़ी के आंकड़े चिंतित करते हैं। इसके अनुसार देश में बैंकिंग धोखाधड़ी का दायरा तेजी से बढ़ रहा है। वित्त वर्ष 2023-24 में धोखाधड़ी की रकम 12,230 करोड़ रुपये थी, जो 2024-25 में करीब तीन गुना बढ़कर 36,014 करोड़ रुपये हो गई। इसमें सरकारी बैंकों में हुई धोखाधड़ी की राशि 25,667 करोड़ रुपये और निजी क्षेत्र के बैंकों में हुई धोखाधड़ी की राशि 10,088 करोड़ रुपये थी। आरबीआइ के अनुसार इस वृद्धि का एक बड़ा कारण 2023 में सुप्रीम कोर्ट के एक फैसले के अनुपालन को सुनिश्चित करने के लिए 122 पुराने मामलों को जोड़ना है। हालांकि इससे बैंकों से गायब हुए 36,014 करोड़ रुपये की समस्या कम नहीं हो जाती। बैंकिंग धोखाधड़ी का प्रभाव वित्तीय नुकसान तक सीमित नहीं होता है। ये बैंकों में जनता के विश्वास को भी कम करते हैं।

वर्ष 2016 में नए नोटों को प्रिंट करने के साथ आरबीआइ ने दावा किया था कि इनमें जो सुरक्षा के उपाय किए गए हैं, उनकी नकल करना काफी मुश्किल है, फिर भी यह नहीं रुक पा रहा है। 2024-25 में बैंकिंग सेक्टर में पकड़े गए नकली नोटों की संख्या में 200 और 500 रुपये की श्रेणी में क्रमशः 14 प्रतिशत और 37 प्रतिशत की वृद्धि देखी गई। यह नहीं कहा जा सकता कि सरकार और रिजर्व बैंक इसे रोकने के लिए प्रयास नहीं कर रहे हैं, लेकिन जैसे-जैसे नोटों की सुरक्षा बढ़ाने के लिए नए-नए उपाय किए जा रहे हैं, वैसे-वैसे ठग उनकी नकल करने की तकनीक भी विकसित करते जा रहे हैं, जिससे आम आदमी के लिए नकली और असली नोटों के बीच अंतर करना मुश्किल हो जाता है। राष्ट्रीय जांच एजेंसी (एनआइए) ने पाया है कि इन नकली नोटों को भारत भेजने के लिए नेपाल और पाकिस्तान के मार्ग का उपयोग किया जा रहा है। ये नकली नोट पाकिस्तान में छापे जाते हैं। बाजार में नकली करेंसी आने से मौजूद धन की मात्रा में वृद्धि हो जाती है, जो बाजार में मुद्रास्फीति को बढ़ाती है और माल एवं सेवाओं की भारी मांग उत्पन्न करती है। इसके अतिरिक्त ऐसे नकली नोटों का उपयोग आतंकवादियों द्वारा भारत के खिलाफ किया जा रहा है। जाली नोट किसी भी अर्थव्यवस्था के लिए घातक होते हैं। इससे पार पाना आरबीआइ और सरकार के लिए एक बड़ी चुनौती है।

एआइ टूल के जरिये सतर्कता बढ़ाता रिजर्व बैंक। फाइल

आरबीआइ के अनुसार निजी क्षेत्र के बैंकों में दर्ज फ्राड की संख्या में डेबिट-क्रेडिट कार्ड/इंटरनेट बैंकिंग से संबंधित धोखाधड़ी का सबसे बड़ा हिस्सा है। वहीं सरकारी बैंकों में धोखाधड़ी मुख्य रूप से लोन सेगमेंट में है, जिसमें कई स्तरों पर मिलीभगत शामिल होती है। रिपोर्ट में कहा गया है कि लोन से संबंधित धोखाधड़ी संख्या के हिसाब से 33 प्रतिशत से अधिक मामलों और वैल्यू के हिसाब से 92 प्रतिशत से अधिक मामलों के लिए जिम्मेदार है। बड़ी बात यह है कि रिपोर्ट किए गए मामले एक लाख रुपये और उससे अधिक की धोखाधड़ी के लिए हैं। यानी इससे कम राशि के बैंक फ्राड को इसमें नहीं लिया गया है। भारत में यूनिफाइड पेमेंट्स इंटरफेस (यूपीआइ) की लोकप्रियता के कारण छोटे-छोटे आनलाइन लेनदेन बहुत होते हैं, जो अब ठगों के लिए बड़ा मौका बन रहे हैं। यूपीआइ आज देश में तीन लाख करोड़ डालर से अधिक का सालाना कारोबार संभाल रहा है। बैंकों से चोरी का सबसे पुराना और आम तरीका फर्जी दस्तावेजों या रिश्वत के जरिये लोन लेना है, जो आज भी बदस्तूर जारी है। अब आम ग्राहकों के लिए भी खतरा बढ़ रहा है, क्योंकि 50 प्रतिशत से अधिक फ्राड डिजिटल या कार्ड आधारित लेनदेन में हो रहे हैं। आज के समय में फिशिंग अटैक से लेकर सिम कार्ड क्लोनिंग जैसे हाईटेक तरीकों तक, ठग हर तरह की चाल चल रहे हैं। फिशिंग अटैक एक प्रकार का साइबर हमला है जिसमें हैकर्स लोगों को धोखा देकर उनकी निजी जानकारी जैसे कि क्रेडिट कार्ड नंबर, बैंक खाते की जानकारी या पासवर्ड चुराने की कोशिश करते हैं।

इन सभी समस्याओं से निपटने के लिए हाल में आरबीआइ ने 'म्यूलहंटर' नामक एक एआइ टूल पेश किया है, जो संदिग्ध लेनदेन को पकड़ने की कोशिश करता है। इसके अलावा डिजिटल पेमेंट के लिए एक इंटेलिजेंस प्लेटफार्म का प्रोटोटाइप भी बनाया जा रहा है। भारत के मनी लांड्रिंग कानून बैंकों को तुरंत एक्शन लेने में सक्षम नहीं बना पा रहे हैं। इसमें भी सुधार करने की आवश्यकता है। डेलायट रिसर्च एजेंसी के अनुसार देश में 2026 तक 100 करोड़ लोग स्मार्टफोन का उपयोग करेंगे। निकट भविष्य में डिजिटल बैंकिंग अर्थव्यवस्था का नेतृत्व करेगी। फिनटेक भारतीय बैंकिंग और भुगतान प्रणाली के लिए आगे का रास्ता है। बस आवश्यकता है इसे सुगम और सुरक्षित बनाने की। इसके लिए बैंकों द्वारा केवल "सावधान रहें" कहना पर्याप्त नहीं है। इससे काम नहीं चलने वाला है। समय के साथ पेमेंट इंडस्ट्री को मजबूत और टिकाऊ बनाना होगा। कर्मचारियों के साथ ही ग्राहकों का साइबर जागरूक होना आवश्यक है। अमेरिका, ब्रिटेन, जर्मनी और इजरायल जैसे कुछ देशों ने साइबर जागरूकता को स्कूली पाठ्यक्रम में शामिल कर लिया है। हमें भी इस दिशा में सोचने की आवश्यकता है। अर्थव्यवस्था के लिए चुनौती बने बैंकिंग फ्राड और नकली नोटों की समस्या का इलाज मुश्किल तो है, पर नामुमकिन नहीं।

(लेखक जेएनयू के अटल स्कूल आफ मैनेजमेंट में प्रोफेसर हैं)

response@jagran.com

ऊर्जा

शिव और प्रकृति

शिव प्रकृति के पूरक हैं और प्रकृति शिव की पूरक है। इसलिए भोलेनाथ ने स्त्री के महत्व को वरीयता देते हुए अर्धनारीश्वर का रूप धारण किया। जिस तरह स्त्री के बिना इस सृष्टि की कल्पना ही अधूरी है, उसी तरह प्रकृति के बिना मनुष्य भी अधूरा है। प्रकृति के यौवन को संवारने में शिव का बहुत बड़ा योगदान है।

समुद्र मंथन के समय निकले विष को शिव ने ही प्रकृति की रक्षा के लिए गले में धारण किया। बाघ के बाघंबर को धारण करते हुए यह संदेश दिया कि अहंकार किसी का नहीं रहता। शिव ने सर्प को अपने शरीर पर धारण किया और जीव दया का संदेश दिया। चंद्रमा को धारण कर शीतलता, पहाड़ों पर रहकर प्रकृति की गोद में निवास, गंगा को धारण कर जल के महत्व को दर्शाकर प्रकृति के प्रति अपने सहयोग और प्रतिबद्धता का प्रतिपादन किया। शिव की दाईं आंख में सूर्य, बाईं आंख में चंद्रमा और तीसरी आंख में अग्नि विराजमान हैं, जो प्रकृति का संतुलन बनाए रखने में सहायक हैं। शिव की भक्ति में ही प्रकृति की शक्ति निहित है। मनुष्य में प्रकृति को हरे वृक्षों से आच्छादित, नदियों को प्रदूषण मुक्त, सभी जीवों के प्रति कृतज्ञता और सभी जीवनोपयोगी प्राकृतिक संसाधनों का सदुपयोग करने का भाव शिव के निकट जाने के लिए पर्याप्त है। प्राकृतिक गतिविधियों के सुचारु रूप से चलाने में सहयोग ही शिव की भक्ति है। इससे उपजी शक्ति से समस्त सृष्टि ऊर्जावान हो जाती है। पूरा वातावरण शिवमय हो जाता है।

जब व्यक्ति देवत्व प्राप्त कर लेता है तो प्रकृति के उतने ही करीब हो जाता है। दूसरे शब्दों में कहें तो जिसने प्रकृति का सान्निध्य पा लिया, उसने शिव को भी अपने रोम-रोम में बसा लिया। ऐसी स्थिति में मनुष्य भौतिकता से परे चला जाता है और सब कुछ शिव हो जाता है। जहां शिव का अर्थ है कल्याण, कल्याण और कल्याण।

पारुल हर्ष बंसल

किशोरमन को थामें अभिभावक

डा. मोनिका शर्मा

दुखद यह है कि किशोरों की संलिप्तता अपहरण, ब्लैकमेलिंग, चोरी और यौन शोषण जैसे मामलों में भी बढ़ती जा रही है

किशोरों के मन में पनपती रंजिशें और आक्रोश समग्र समाज के लिए एक गंभीर चिंता का विषय बन गई हैं। हाल में हरियाणा के हिसार में गुरु पूर्णिमा के दिन दो छात्रों ने प्रिंसिपल की चाकू मारकर हत्या कर दी। कक्षा 11वीं और 12वीं के ये छात्र बाल छोटे रखने, सही ढंग से यूनिफार्म पहनने और अनुशासन में रहने की बात से नाराज होकर इस जघन्य अपराध को अंजाम दिए। लखनऊ में एक नाबालिग लड़की को सहेली की तबीयत खराब होने की बात कहकर बुलाने के बाद उसके सहपाठियों ने सामूहिक दुष्कर्म किया। पुणे में एक नाबालिग छात्रा की दुष्कर्म के बाद हत्या कर दी गई। ऐसी हृदयविदारक घटनाएं देश के हर हिस्से में हो रही हैं और इनमें से अधिकांश के पीछे कोई ठोस कारण नहीं होता। यह घटनाएं दर्शाती हैं कि नई पीढ़ी में द्वेष और प्रतिशोध की भावना कितनी गहराई तक पैठ बना चुकी है। अभिभावक भी इन रंजिशों और बदलते व्यवहार को समझने में असफल हो रहे हैं, जबकि माता-पिता की सजगता और संवेदनशीलता इस समय सबसे अधिक आवश्यक है।

दुखद यह है कि किशोरों की संलिप्तता अपहरण, ब्लैकमेलिंग, चोरी, साइबर स्कैम और यौन शोषण जैसे मामलों में भी बढ़ती जा रही है। यह स्थिति चिंताजनक है कि किशोरवय बच्चे नकारात्मकता और दुर्भावना के जाल में फंसते जा रहे हैं। संगीन अपराधों में नई पीढ़ी की भागीदारी समाज के लिए एक बड़ा सदमा है। हाल के वर्षों में किशोरों की संख्या में वृद्धि हुई है, जो पेशेवर अपराधियों की तरह व्यवहार कर रहे हैं। भारत में किशोरों की जनसंख्या 25.3 करोड़ है, जिसमें हर पांचवें व्यक्ति की उम्र 10 से 19 वर्ष के बीच है। ऐसे में अभिभावकों की भूमिका इन बच्चों को सही दिशा में मार्गदर्शन देने में अत्यंत महत्वपूर्ण है। अभिभावकों को यह समझना होगा कि किशोरों की मनःस्थिति को सकारात्मक दिशा में मोड़ने के लिए उन्हें शिक्षकों के सम्मान और संयम की शिक्षा देनी होगी। उन्हें यह भी समझना होगा कि आभासी दुनिया और बदलती पारिवारिक संरचना के कारण किशोर किस प्रकार भटकाव का शिकार हो रहे हैं।

किशोरों की परवरिश में अभिभावकों की सजगता आवश्यक है। मामूली बातों से आहत होकर योजनाबद्ध तरीके से की जा रही हृदयविदारक घटनाएं समाज को भयभीत कर रही हैं। ऐसे में माता-पिता को अपने बच्चों के मनोविज्ञान और उनके विचारों को समझने की आवश्यकता है। किशोरों के बदलते मनोविज्ञान और दिशाहीन विचारों को सही दिशा देने के लिए अभिभावकों का मार्गदर्शन अत्यंत आवश्यक है। उन्हें एक सधी जीवनशैली और संस्कारी सोच का परिवेश बनाने का प्रयास करना चाहिए। किशोरों की बढ़ती हिंसा और आपराधिक प्रवृत्तियों को रोकने के लिए अभिभावकों की जिम्मेदारी और सजगता सबसे महत्वपूर्ण है।

(लेखिका स्वतंत्र टिप्पणीकार हैं)

नियमों में फंसी उद्यम नीति

'बोझ के बजाय सुगमता बढ़ाएं कानून' शीर्षक से प्रकाशित आलेख लक्षिता मेहरोत्रा एवं सुधांशु नीमा द्वारा संयुक्त रूप से लिखा गया है, जिसमें विधिक माप विज्ञान अधिनियम के अनुपालन से जुड़ी चुनौतियों को केंद्र में रखा गया है। आलेख यह स्थापित करता है कि उपभोक्ता संरक्षण की मंशा से बना यह अधिनियम आज की तारीख में विशेष रूप से छोटे और मझोले उद्यमों के लिए जटिलता और भय का स्रोत बन गया है। एचएंडएम, ब्रिटानिया और आइटीसी जैसे उदाहरणों के माध्यम से यह दिखाया गया है कि कैसे मात्र लेबलिंग या मापन इकाइयों में तकनीकी चूक भी आपराधिक मामले बन जाती है। आलेख यह सुझाव देता है कि नियमों को सरल बनाकर क्यूआर कोड जैसे डिजिटल साधनों से जोड़ा जाए, आपराधिक दंडों को सीमित किया जाए और लाइसेंसिंग प्रक्रिया को एकीकृत किया जाए। यह दृष्टिकोण सुधारवादी अवश्य है, परंतु अधूरा भी। कभी-कभी यह प्रतीत होता है मानो एक छोटा व्यापारी अब सामान से अधिक कानून की धाराओं को तौल रहा हो- जहां मुनाफा तराजू से नहीं, नियमों की पेचीदगियों से तय होता है। यह स्थिति न तो उपभोक्ता के लिए हितकारी है, न ही कारोबार के लिए। आलेख की सबसे बड़ी सीमा यह है कि यह केवल उद्यमिता के दृष्टिकोण से कानून की समीक्षा करता है, जबकि उपभोक्ता हित, ग्रामीण बाजार की सच्चाई और नियामकीय संतुलन पर मौन साध लेता है। कानून की आलोचना यदि एकतरफा हो, तो वह नीति सुधार के बजाय भ्रम उत्पन्न करती है। संतुलन, पारदर्शिता और बहुपक्षीय विवेचना ही किसी आलेख को वास्तव में उपयोगी बनाती है।

awanishg30@gmail.com

प्रतिक्रिया

विपक्ष का बेजा विरोध

'मतदाता सूची के सत्यापन पर व्यर्थ का शोर' शीर्षक से प्रकाशित आलेख में संजय गुप्त ने बिहार में चुनाव आयोग की सामान्य प्रक्रिया को लेकर हाय-तौबा मचाते विपक्ष को आड़े हाथों लिया है। बिहार में विधानसभा चुनाव होने हैं, निष्पक्ष चुनाव के लिए भारत का चुनाव आयोग चुनाव से पूर्व वहां की मतदाता सूची को दुरुस्त करने में लगा हुआ है। चुनाव आयोग द्वारा मतदाता सूची पुनरीक्षण की इस सामान्य प्रक्रिया को लेकर विपक्ष निहित स्वार्थवश इसे रोकने की हर संभव कोशिश कर रहा है। हालांकि सुप्रीम कोर्ट ने चुनाव आयोग द्वारा मतदाता सूची पुनरीक्षण की प्रक्रिया को सही ठहराते हुए कुछ आवश्यक सुझावों के साथ इस पर रोक लगाने से मना कर दिया है। बावजूद इसके कांग्रेस सहित अन्य मोदी विरोधी दल चुनाव आयोग सहित मोदी सरकार पर हमलावर होकर अपनी खीझ मिटा रहे हैं। यद्यपि विपक्षी राजनीतिक दल इस बात को ठीक से समझ रहे हैं कि सुप्रीम कोर्ट के फैसले के बाद चुनाव आयोग द्वारा जारी मतदाता सूची पुनरीक्षण की प्रक्रिया को रोक पाना अब उनके वश की बात नहीं है। फिर भी इन विपक्षी दलों का अनावश्यक विरोध जारी है जो संविधान और लोकतंत्र की मर्यादा के विपरीत है।

pandeyvp1960@gmail.com

जांच कम, लीपापोती ज्यादा

अहमदाबाद विमान हादसे की प्रारंभिक जांच रिपोर्ट ने कई गंभीर सवाल खड़े कर दिए हैं। रिपोर्ट में यह दर्शाने का प्रयास किया गया है कि हादसा पायलटों की गलती के कारण हुआ, विशेष रूप से फ्यूल का स्विच आफ कर देने जैसी चूक से। लेकिन यह सवाल अनदेखा नहीं किया जा सकता कि अत्यंत अनुभवी पायलट इस स्तर की गंभीर भूल कैसे कर सकते हैं? आधुनिक विमानों में ऐसे संभावित खतरों को टालने के लिए सुरक्षा के कई स्तर होते हैं, जो ऐसी गलती को होने से रोकते हैं। बोइंग पर पूर्व में भी यह आरोप लगे हैं कि उसने अपने विमानों के निर्माण में सुरक्षा उपायों की अनदेखी की। यहां तक कि इस कंपनी के ही कुछ कर्मचारियों ने सार्वजनिक रूप से इस पर सवाल उठाए थे। भारत सरकार की जिम्मेदारी बनती है कि वह इस दुर्घटना के वास्तविक कारणों की गहराई से जांच कराए। जवाबदेही सुनिश्चित करना वक्त की मांग है।

मधु सुभाष बुड़ावन वाला, रतलाम, मप्र

इस स्तंभ में किसी भी विषय पर राय व्यक्त करने अथवा दैनिक जागरण के राष्ट्रीय संस्करण पर प्रतिक्रिया व्यक्त करने के लिए पाठकगण सादर आमंत्रित हैं। आप हमें पत्र भेजने के साथ ई-मेल भी कर सकते हैं।
अपने पत्र इस पते पर भेजें :
दैनिक जागरण, राष्ट्रीय संस्करण,
डी-210-211, सेक्टर-63, नोएडा
ई-मेल: response@jagran.com

संस्थापक- स्व. पूर्णचन्द गुप्त, पूर्व प्रधान संपादक- स्व. नरेन्द्र मोहन, चीफ एग्जीक्यूटिव ऑफिसर- महेन्द्र मोहन गुप्त, प्रधान संपादक- संजय गुप्त, जागरण प्रकाशन लि. के लिए; नीतेन्द्र श्रीवास्तव द्वारा 501, आई.एन.एस. बिल्डिंग, रफी मार्ग, नई दिल्ली से प्रकाशित और उन्हीं के द्वारा डी-210, 211, सेक्टर-63 नोएडा से मुद्रित, संपादक (राष्ट्रीय संस्करण) -विष्णु प्रकाश त्रिपाठी*
दूरभाष : नई दिल्ली कार्यालय : 011-43166300, नोएडा कार्यालय : 0120-4615800, E-mail: delhi@nda.jagran.com, R.N.I. No. DELHIN/2017/74721 * इस अंक में प्रकाशित समस्त समाचारों के चयन एवं संपादन हेतु पी.आर.बी. एक्ट के अंतर्गत उत्तरदायी। समस्त विवाद दिल्ली न्यायालय के अधीन ही होंगे। हवाई/रेल शुल्क ₹-2 अतिरिक्त।
****

हां 88% नहीं 12% — क्या उत्तर भारतीय प्रवासियों के खिलाफ क्षेत्रीय और भाषाई अस्मिता को हथियार बनाया जा रहा है?

हां 86% नहीं 14% — क्या महाराष्ट्र और दक्षिण भारतीय राज्यों में चुनावी फायदे के लिए हिंदी का हौवा खड़ा किया जा रहा है?

मुद्दा से संबंधित अपनी राय, सुझाव और प्रतिक्रिया mudda@jagran.com पर भेज सकते हैं।

क्षेत्रीय अस्मिता बनाम राष्ट्रीयता

कई भाषाएं, दुनिया के सभी धर्मों की मौजूदगी। वनों से आच्छादित हिमालय और उसकी श्वेत चोटियां, गंगा के उपजाऊ मैदान और रेगिस्तान। ये सभी भारत को विविधता से समृद्ध एक खूबसूरत देश बनाते हैं। लेकिन कई बार यही विविधता राष्ट्रीयता पर आघात करने का हथियार बन जाती है। महाराष्ट्र और दक्षिण भारतीय राज्यों में क्षेत्रीय और भाषाई अस्मिता के नाम पर उत्तर भारत से गए प्रवासियों के साथ दोयम दर्जे के नागरिकों जैसा व्यवहार हो रहा है। तथ्य यह है कि उत्तर प्रदेश, बिहार और बंगाल से गए प्रवासी मजदूरों ने मुंबई, बेंगलुरु, चेन्नई जैसे शहरों को अपने श्रम से सींचा है। वहां की अर्थव्यवस्था में योगदान दिया है। इसके अलावा गरीब राज्यों में उपलब्ध खनिजों का इस्तेमाल करके ही महाराष्ट्र और दक्षिण भारत के राज्य तरक्की के ऊंचे पायदान पर हैं। आज राजनीतिक दल क्षेत्रीय और भाषाई अस्मिता को उभार कर चुनावी लाभ हासिल करने का प्रयास कर रहे हैं। इस प्रक्रिया में निशाना बन रहे हैं प्रवासी मजदूर और उत्तर भारतीय। क्षेत्रीय और भाषाई अस्मिता के नाम पर उपनिवेशवाद की संस्कृति को बढ़ावा देने के चलन और इसके नतीजों की पड़ताल आज का अहम मुद्दा है?

गरीब राज्यों के श्रम व संसाधनों से फल-फूल रहे विकसित राज्य

भारत का तेज आर्थिक विकास अक्सर महत्वपूर्ण क्षेत्रीय असंतुलन को छुपा लेता है। विकसित राज्य उन्नत उद्योगों और सेवाओं के बल पर फलते-फूलते हैं। पूंजी और प्रतिभा को आकर्षित करते हैं। वहीं श्रम और प्राकृतिक संसाधनों से समृद्ध कम विकसित राज्य अक्सर अपने योगदान से विकसित राज्यों को लाभान्वित होते देखते रहते हैं।

प्रवासी श्रमिकों का अमीर राज्यों की अर्थव्यवस्था में अहम योगदान

बिहार, उत्तर प्रदेश और झारखंड जैसे राज्य महाराष्ट्र, गुजरात, तमिलनाडु और कर्नाटक जैसे आर्थिक रूप से उन्नत राज्यों के लिए प्रवासी श्रमिकों के प्राथमिक स्रोत हैं। इन क्षेत्रों से अनुमानित 2.2 करोड़ प्रवासी अपेक्षाकृत शहरी केंद्रों के लिए महत्वपूर्ण हैं, जो मुख्य रूप से निर्माण, विनिर्माण और सेवा क्षेत्रों में काम करते हैं।

प्रवासियों का राज्यों की जीडीपी में योगदान

महाराष्ट्र

45.31 लाख करोड़ रुपये की है महाराष्ट्र की जीडीपी

9 लाख करोड़ रुपये तक योगदान करते हैं प्रवासी श्रमिक राज्य की जीडीपी में

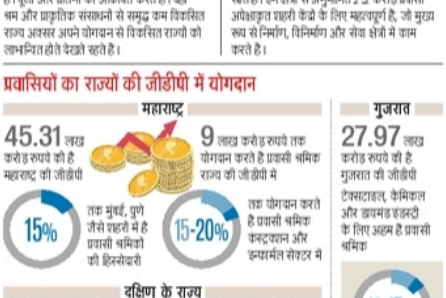

15% तक मुंबई, पुणे जैसे शहरों में है प्रवासी श्रमिकों की हिस्सेदारी

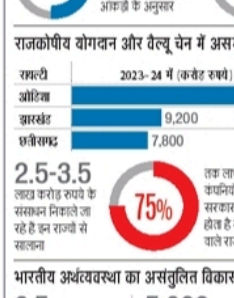

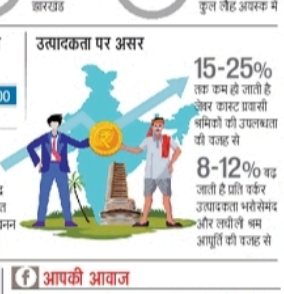

15-20% तक योगदान करते हैं प्रवासी श्रमिक कंस्ट्रक्शन और इन्फार्मल सेक्टर में

गुजरात

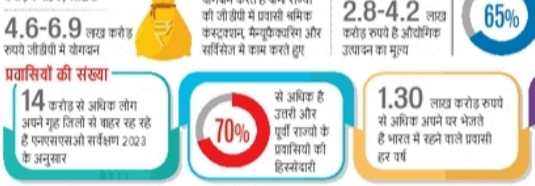

27.97 लाख करोड़ रुपये की है गुजरात की जीडीपी

टेक्सटाइल, केमिकल और डायमंड इंडस्ट्री के लिए अहम हैं प्रवासी श्रमिक

10-15% तक औद्योगिक उत्पादन में करते हैं योगदान

2.8-4.2 लाख करोड़ रुपये है औद्योगिक उत्पादन का मूल्य

दक्षिण के राज्य

31 लाख करोड़ रुपये तमिलनाडु, जीडीपी

27.07 लाख करोड़ कर्नाटक, जीडीपी

4.6-6.9 लाख करोड़ रुपये जीडीपी में योगदान

8-12% योगदान करते हैं दोनों राज्यों की जीडीपी में प्रवासी श्रमिक कंस्ट्रक्शन, मैन्यूफैक्चरिंग और सर्विसेज में काम करते हुए

गरीब राज्यों से निकाले जाने वाले खनिजों का वैश्विक मूल्य

खनिज संसाधनों से संपन्न लेकिन आर्थिक रूप से गरीब राज्य भारत की औद्योगिक आपूर्ति शृंखला के लिए महत्वपूर्ण हैं।

51% रहा भारत के बाक्साइट उत्पादन में ओडिशा का योगदान 2022-23 के आंकड़ों के अनुसार

26% तक भारत के कोयला उत्पादन में योगदान देता है झारखंड

16% तक लौह अयस्क की आपूर्ति करता है छत्तीसगढ़ देश के कुल लौह अयस्क में

राजकोषीय योगदान और वैल्यू चेन में असमानता

रायल्टी	2023-24 में (करोड़ रुपये)
ओडिशा	21,500
झारखंड	9,200
छत्तीसगढ़	7,800

2.5-3.5 लाख करोड़ रुपये के संसाधन निकाले जा रहे हैं इन राज्यों से सालाना

75% तक लाभ निजी कंपनियों या केंद्र सरकार को प्राप्त होता है न कि खनन वाले राज्यों को

उत्पादकता पर असर

15-25% तक कम हो जाती है लेबर कास्ट प्रवासी श्रमिकों की उपलब्धता की वजह से

8-12% बढ़ जाती है प्रति वर्कर उत्पादकता भरोसेमंद और लचीली श्रम आपूर्ति की वजह से

भारतीय अर्थव्यवस्था का असंतुलित विकास

6.5 लाख करोड़ रुपये की गरीब राज्यों से प्राप्त जमा राशि विकसित राज्यों में निवेश की जाती है

5,000-45,000 करोड़ रुपये का घाटा अपनी जीडीपी में उठाते हैं बिहार जैसे राज्य

65% एफडीआइ देश का आकर्षित करते हैं देश के विकसित क्षेत्र, महाराष्ट्र, गुजरात और कर्नाटक की सबसे ज्यादा है हिस्सेदारी

जागरण रिसर्च

प्रवासियों की संख्या

14 करोड़ से अधिक लोग अपने गृह जिलों से बाहर रह रहे हैं एनएसएसओ सर्वेक्षण 2023 के अनुसार

70% से अधिक है उत्तरी और पूर्वी राज्यों के प्रवासियों की हिस्सेदारी

1.30 लाख करोड़ रुपये से अधिक अपने घर भेजते हैं भारत में रहने वाले प्रवासी हर वर्ष

30% तक योगदान देती है यह रकम ग्रामीण घरेलू उपभोग में

आपकी आवाज

नकली शिवसेना वाला उद्धव गुट अपनी खोई हुई राजनीतिक जमीन वापस पाने के लिए और मराठी वोट को एकजुट करने के लिए उत्तर भारतीय प्रवासियों के खिलाफ घृणित अभियान चला रहा है। इसके लिए वह मराठा मानुष और मराठी भाषा की अस्मिता को बचाने की पहल को हथियार के रूप में प्रयोग कर रहा है। उसे 20 वर्ष बाद अवसरवादी मनसे का भी साथ मिल रहा है, जो पहले भी उत्तर भारतीय प्रवासियों की घोर विरोधी रही है। **गौरीशंकर अंबज**

संविधान में हिंदी भाषा को बढ़ावा देने के प्रविधान के बावजूद आजादी के बाद इस दिशा में गंभीरता से प्रयास नहीं किए गए। इसकी वजह यह थी कि शासन और न्यायपालिका की भाषा अंग्रेजी ही रही। लंबे समय के बाद अगर इस दिशा में प्रयास किया जा रहा है तो क्षेत्रीय भाषाओं की आड़ में इसका विरोध हो रहा है। **उमेश वर्मा**

भाषा के नाम पर प्रवासियों के साथ दोयम दर्जे का व्यवहार निंदनीय है। विकसित राज्यों की अर्थव्यवस्था में इन प्रवासियों का अहम योगदान है। इसके अलावा विकसित राज्य उन्हीं गरीब राज्यों के संसाधनों का दोहन कर रहे हैं जहां से प्रवासी आए हैं। **प्रांशु**

सरकार दूर करे आर्थिक असमानता

विकास सिंह
विशेषज्ञ, समग्र विकास

उत्तर और पूर्व के राज्यों के पिछड़ेपन के लिए ऐतिहासिक कारण जिम्मेदार हैं। इन राज्यों की खनिज संपदा का दोहन हुआ लेकिन इससे पैदा हुआ धन इनके हिस्से में नहीं आया। उदारीकरण के बाद भी इन राज्यों के साथ अन्याय जारी है।

मुंबई की ऊंची इमारतों और चेन्नई के टेक पार्कों में, बिहार, उत्तर प्रदेश और झारखंड के प्रवासी निर्माण, सफाई और वितरण का काम करते हैं। वे भारत के तेजी से बढ़ते शहरों को ऊर्जा प्रदान करते हैं। 2024 के सीएमआईई अध्ययन का अनुमान है कि वे महाराष्ट्र की जीडीपी में 6.8 लाख करोड़ रुपये अधिक का योगदान करते हैं, लेकिन वे झुग्गी-झोपड़ियों में रहते हैं, भेदभाव का सामना करते हैं, और अक्सर बाहरी करार दिए जाते हैं। उनके भेजे गए धन से ग्रामीण परिवारों का गुजारा चलता है, फिर भी उनका अपना जीवन बहुत कम सम्मान या सुरक्षा हासिल कर पाता है।

भारत के तेज आर्थिक विकास के बीच झारखंड के कोयला शहर और बंगाल के बाढ़ के मैदान गरीबी में फंसे हुए हैं। सड़कें टूटी हुई हैं, नौकरियां कम हैं, और गांव के लोग अपने अपने बच्चों को दूर भेजकर जीवन यापन कर रहे हैं। यह अन्याय नैतिक विफलता से कहीं अधिक है। भारत जीडीपी रैंकिंग में ऊपर चढ़ रहा है, यह दो भागों में विभाजित राष्ट्र भी बन रहा है। दक्षिण और पश्चिम आगे बढ़ रहे हैं, उत्तर और पूर्व पीछे छूट रहे हैं। साझा अवसर के बिना, राष्ट्रीय समृद्धि का सपना अधूरा और अस्थिर रहेगा।

2025 में भी भारतीय अर्थव्यवस्था विरोधाभासों की कहानी बनी रहेगी। अकेले महाराष्ट्र का देश की जीडीपी में लगभग 16 प्रतिशत का योगदान है। कर्नाटक और तमिलनाडु अरबों डालर का प्रत्यक्ष विदेशी निवेश आकर्षित करते हैं और साफ्टवेयर, आटोमोबाइल और इलेक्ट्रानिक्स क्षेत्र में अग्रणी हैं। बेंगलुरु, हैदराबाद और चेन्नई जैसे शहर उद्यम के वैश्विक केंद्र के रूप में फल-फूल रहे हैं।

इस बीच, बिहार, बंगाल और झारखंड में प्रति व्यक्ति आय नाटकीय रूप से पिछड़ रही है। बिहार की प्रति व्यक्ति आय लगभग 58,000 रुपये है, जो महाराष्ट्र के 2,50,000 रुपये के एक-चौथाई से भी कम है। ऐसा नहीं है कि इन राज्यों के लोगों की क्षमता में बहुत अंतर है। यह अंतर दशकों से चले आ रहे असमान निवेश, बुनियादी ढांचे तक असमान पहुंच और पिछड़े क्षेत्रों में मजबूत संस्थानों का निर्माण न हो पाने में निहित है। दक्षिणी राज्यों को बंदरगाहों तक पहुंच, औद्योगिक नीति और मानव विकास के लिए जरूरी सुविधाओं में निवेश का शुरुआती लाभ मिला। उनकी शासन संरचनाएं अक्सर अधिक प्रभावी रहीं, जिससे विकास का एक अच्छा चक्र बना। समय के साथ, सफलता ने अधिक पूंजी आकर्षित की। पूंजी ने बड़े पैमाने पर प्रतिभाओं को अपनी ओर खींचा और प्रतिभा ने सफलता को और मजबूत किया। इसके विपरीत, उत्तरी और पूर्वी राज्य औद्योगिक लहर से चूक गए। वहां कनेक्टिविटी का अभाव था, और वे खराब प्रशासन और राजनीतिक अस्थिरता के बोझ तले दबे हुए थे।

खनिज उत्पादक राज्यों में यह असमानता सबसे ज्यादा दिखती है। झारखंड, छत्तीसगढ़ और ओडिशा कोयला, लौह अयस्क और बाक्साइट से समृद्ध हैं। लेकिन वैल्यू एडिशन कहीं और होता है। पूरे भारत में खनिजों के एक समान मूल्य निर्धारण का अर्थ है कि गुजरात में एक इस्पात संयंत्र झारखंड में एक खदान के बगल वाले संयंत्र के समान ही कीमत चुकाता है। स्थान का आर्थिक लाभ शून्य हो जाता है। ये राज्य पर्यावरणीय क्षरण, विस्थापन और राजनीतिक अस्थिरता से पीड़ित हैं, लेकिन खनिजों के दोहन से पैदा होने वाली राशि बाहर चली जाती है।

असम के तेल और गैस क्षेत्र भारत के विकास को बढ़ावा देते हैं, फिर भी राज्य में राजकोषीय लाभ का बहुत कम हिस्सा रहता है। अधिकांश कारपोरेट मुख्यालय मुंबई, चेन्नई या दिल्ली में स्थित हैं। इसका नतीजा यह है कि कर राजस्व शहरों में प्रवाहित होता है, न कि उत्पादक क्षेत्रों में। अकेले मुंबई से इस वर्ष भारत के कारपोरेट कर राजस्व का 32 प्रतिशत से अधिक आने की उम्मीद है। इससे यह धारणा बनती है कि आर्थिक शक्ति केवल महानगरों में ही निहित है।

वित्तीय प्रवाह इस असंतुलन को और मजबूत करते हैं। बिहार और उत्तर प्रदेश में जुटाई गई बचत का निवेश नियमित रूप से दक्षिण और पश्चिम में किया जाता है। स्थानीय व्यवसायों को ऋण प्राप्त करने में कठिनाई होती है, जबकि उनकी जमा राशि अन्यत्र विकास को वित्तपोषित करती है। पूंजी का यह शांत पुनर्वितरण स्थानीय उद्यमों को अवरुद्ध करता है और प्रवास पर निर्भरता को बढ़ाता है।

भारत को इस बढ़ते हुए विभाजन को पाटने के लिए तत्काल कार्रवाई करनी चाहिए। एकीकृत अर्थव्यवस्था का मार्ग राजकोषीय पुनर्विचार और संरचनात्मक परिवर्तन, दोनों में निहित है।

सबसे पहले, खनिज संसाधनों से संपन्न राज्यों को उनके द्वारा उत्पन्न धन का एक बड़ा हिस्सा अपने पास रखने की अनुमति दी जानी चाहिए। स्थानीय रूप से निकाले गए खनिजों के लिए अलग-अलग मूल्य निर्धारण स्थानीय औद्योगीकरण को प्रोत्साहित करेगा। राज्य के भीतर उपयोग किए जाने वाले खनिजों पर शुल्क लगाने से बुनियादी ढांचे, स्वास्थ्य और शिक्षा के वित्तपोषण में मदद मिल सकती है। राज्य गैर-नवीकरणीय संसाधनों को दीर्घकालिक परिसंपत्तियों में बदलने के लिए नार्वे के तेल संपदा कोष की तरह सावरेन मिनरल फंड बना सकते हैं। दूसरा, केंद्र सरकार से राजकोषीय हस्तांतरण प्रशासनिक क्षमता से जुड़ा नहीं होना चाहिए। वर्तमान में, जो राज्य अधिक कुशलता से खर्च करते हैं, उन्हें अधिक धन मिलता है। इससे कमजोर क्षमता वाले गरीब राज्यों को दंडित किया जाता है। तीसरा, भारत को अपने आंतरिक प्रवासी कार्यबल को औपचारिक बनाना होगा। स्वास्थ्य सेवा, पेंशन और राशन जैसे लाभों की पूर्ण पोर्टेबिलिटी आवश्यक है। एक राष्ट्र, एक राशन कार्ड योजना सार्वभौमिक और पूरी तरह से डिजिटल होनी चाहिए। निवेश के लिए, मेजबान राज्य के उद्योगों से आंशिक वित्तपोषण के साथ प्रवासी योगदान कोष स्थापित किया जा सकता है।

हिंदी के खिलाफ संविधान विरोधी राजनीति पर लगे लगाम

विराग गुप्ता
वकील, सुप्रीम कोर्ट

संविधान के प्रविधान के अनुसार बच्चों को मातृभाषा या क्षेत्रीय भाषा में प्राथमिक शिक्षा मिलने के साथ राजभाषा हिंदी का ज्ञान होना भी जरूरी है। इससे बच्चों के संपूर्ण विकास और देश की सामाजिक सांस्कृतिक एकता मजबूत होने के साथ संविधान की सार्वभौमिकता स्थापित होगी।

कुछ राज्यों में चल रहे भाषा विवाद से जुड़े चार संवैधानिक पहलुओं पर समझ जरूरी है। पहला, संविधान के अनुच्छेद 19 (1) (ई) के अनुसार सभी नागरिकों को पूरे देश में बसने और अनुच्छेद 19 (1) (जी) और 301 के अनुसार जीविकोपार्जन और रोजगार का मौलिक अधिकार हासिल है। संविधान के अनुच्छेद 19 (1) (ए) के तहत लोगों को अभिव्यक्ति की आजादी हासिल है। इनका अनुपालन नहीं होने पर लोगों के जीवन के अधिकार का उल्लंघन होता है, जिसके बारे में अनुच्छेद 21 में जरूरी प्रविधान हैं।

दूसरा, अनुच्छेद 343 (1) के अनुसार 14 सितंबर 1949 को हिंदी को भारत की राजभाषा का दर्जा मिला था। अनुसूची आठ में हिंदी समेत 22 भारतीय भाषाएं शामिल हैं। अनुच्छेद 346 के अनुसार राज्यों और केंद्र सरकार के बीच सहमति के आधार पर हिंदी या अन्य अधिकृत भाषा में भी संचार हो सकता है, जिस तरीके से जम्मू कश्मीर के लिए तात्कालिक तौर पर अनुच्छेद 370 में प्रविधान किए गए थे। उसी तरीके से अनुच्छेद 343 (2) के अनुसार सरकारी कामकाज के लिए अंग्रेजी को 15 वर्ष की अल्पकालिक मान्यता मिली थी। राजभाषा अधिनियम 1963 के अनुसार अंग्रेजी को जीवनदान मिला लेकिन संविधान के अनुसार भारत की राजभाषा हिंदी ही है, लेकिन मैकाले की साम्राज्यवादी विरासत वाली अंग्रेजी असंवैधानिक तरीके से हिंदी और दूसरी क्षेत्रीय भाषाओं के संवैधानिक अधिकार को कुचल रही है। अनुच्छेद 370 की तर्ज पर अंग्रेजी के अधिपत्य को खत्म करने की बजाय क्षेत्रीय भाषाओं की आड़ में संकीर्ण हितों के लिए कुछ राज्यों के नेता हिंदी पर बेवजह प्रहार कर रहे हैं।

तीसरा, संविधान सभा की भाषा समिति में मोटूरि सत नारायण, एन गोपालस्वामी आयंगर, रघुनाथ विनायक धुलेकर, मुहम्मद सादुल्लाह, अल्लादी कृष्णस्वामी अय्यर, केएम मुंशी, बीएल मित्र, एन माधव राव और टीटी कृष्णमाचारी जैसे गैर हिंदी भाषी सदस्य शामिल थे। हिंदी को राजभाषा बनाने के लिए संविधान सभा के अनेक गैर हिंदी भाषी सदस्यों ने समर्थन किया था। क्षेत्रीय भाषाओं को हिंदी के बजाय अंग्रेजी के साम्राज्यवादी विरासत से खतरा है। इसीलिए चक्रवर्ती राजगोपालाचारी, डा. राधाकृष्णन, डा. लक्ष्मण स्वामी मुदलियर और कोठारी जैसे गैर हिंदी भाषी विद्वानों ने हिंदी के साथ क्षेत्रीय भाषाओं के अध्ययन पर जोर दिया था। संविधान और संसद के कानून के अनुसार देश में कई दशकों से त्रिभाषा फार्मूले पर अमल हो रहा है। दुनिया के 200 विश्वविद्यालयों में हिंदी का अध्ययन हो रहा है। इसलिए अनुच्छेद 350 (अ) के अनुसार बच्चों को मातृभाषा या क्षेत्रीय भाषा में प्राथमिक शिक्षा मिलने के साथ अनुच्छेद 343 के अनुसार राजभाषा हिंदी का ज्ञान भी जरूरी है। इससे बच्चों के संपूर्ण विकास और देश की सामाजिक सांस्कृतिक एकता मजबूत होने के साथ संविधान की सार्वभौमिकता स्थापित होगी।

चौथा, मुंबई में हिंदी फिल्म उद्योग ने सभी राज्यों को जोड़ने के साथ अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर हिंदी को मान्यता दिलाई है। भाषा की आड़ में सत्ता की संकीर्ण राजनीति और कानून को हाथ में लेकर हिंसा करना संविधान का घोर निरादर है। सत्ता के गंदे खेल में नागरिकों के कान के नीचे बजाने वालों के कान में संविधानिक सिद्धांतों और एक देश एक कानून के मंत्र को बिगुल की ताकत से फूंकने की जरूरत है। संकीर्ण राजनीति के लिए कानून हाथ में लेने की छूट नहीं दी जा सकती है।

एक भारत श्रेष्ठ भारत के दौर केंद्र सरकार को अनुच्छेद 355 के तहत संबंधित राज्य सरकारों को कठोर दिशा निर्देश जारी करना चाहिए। संविधान की 75वीं वर्षगांठ पर संविधान की प्रभुसत्ता और नागरिकों के मौलिक अधिकारों के ठोस संरक्षण और संविधान की राजभाषा के खिलाफ नफरती अभियान और सियासी हिंसा को रोकने सुप्रीम कोर्ट को भी स्वतः संज्ञान लेने की जरूरत है।

राष्ट्रीय फलक

जामताड़ा की पूर्व उपायुक्त को ही बना दिया मनरेगा मजदूर

मनोज मिश्रा • जागरण

फतेहपुर (जामताड़ा): महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी कानून (मनरेगा) में अजीबोगरीब मामले सामने आते रहते हैं। जामताड़ा के फतेहपुर प्रखंड में इन दिनों मनरेगा चर्चा में है। दरअसल, विभागीय जिम्मेदारों ने जिले की पूर्व उपायुक्त (डीसी) कुमुद सहाय को ही मनरेगा मजदूर बना दिया। मनरेगा की आधिकारिक वेबसाइट पर उनकी एक ग्रुप फोटो अपलोड कर दी गई। इसमें भी लाभुकों के नाम अलग-अलग हैं। कई मजदूरों की जगह नाबालिग बच्चों की फोटो वेबसाइट पर अपलोड है। योजनाओं के क्रियान्वयन और इसकी पारदर्शिता को लेकर अफसरों की लापरवाही साफ दिख रही है।

बबनडीहा पंचायत के करजोरी ग्राम में पोटो हो खेल विकास योजना प्ले ग्राउंड वर्क कोड 3412002007/एवी/7080901184378 एमएसआर नंबर 27734 है। अब इस योजना में 11 जुलाई को मजदूरों की जो फोटो अपलोड की गई है, उसमें जिले की पूर्व डीसी कुमुद सहाय समेत तीन अन्य लोगों को मनरेगा मजदूर बताया गया है। इसमें मजदूरों के नाम में मंटू हांसदा, सुनील टुडू, लीलमुणी किस्कू, परिमल बेसरा दर्शाया गया है।

करजोरी गांव की प्ले ग्राउंड योजना में पूर्व डीसी कुमुद सहाय समेत अन्य लोगों को मजदूर बता किया

कुमुद सहाय

जामजोड़ी पंचायत में पांच में से चार बाल मजदूर

इसी तरह जामजोड़ी पंचायत के डिगलग्राम में मिसील मुर्मू की जमीन पर लैंड लेवलिंग योजना वर्क कोड 3412002016/ एलडी/ 70809012062 57 एमएसआर नंबर 25428 है। इस योजना में छह जुलाई की जो फोटो अपलोड की गई है, उसमें पांच मजदूरों में से चार बाल मजदूर हैं। इस योजना में साधू चरण गोराई, जगबंधु गोराई, निरासी गोराई, टुंपा गोराई व शचिन गोराई मजदूर के रूप में दर्शाया गया है। इसी पंचायत के डिगलग्राम गांव में ही मनोरंजन गोराई की जमीन पर लैंड लेवलिंग में भी उसी फोटो को अपलोड कर दिया गया है। जो मिसील मुर्मू की योजना में फोटो अपलोड की गई है। दोनों ही फोटो छह जुलाई को अपलोड की गई है। फोटो में सिर्फ अंतर इतना है कि लोगों का स्थान बदल दिया गया है। साथ ही कुमारेश मंडल, शोभा मंडल, नंदलाल मंडल, मिताली मंडल व कांचन गोराई का नाम मजदूरों की सूची में दर्शाया गया है। फतेहपुर प्रखंड में इस बात की चर्चा है कि यहां मनरेगा योजना सिर्फ कागजों और वेबसाइट पर चल रही है। पूर्व डीसी को मजदूर बनाया जाना घोर लापरवाही का नतीजा है। जामजोड़ी पंचायत में बाल मजदूरों को मनरेगा मजदूर दर्शाया जाना भी बाल मजदूरी कानून के अंतर्गत अपराध है। सरकारी काम में बाल मजदूरों को लगाना ही बड़ा प्रश्न खड़ा कर रहा है। दो पंचायत में ऐसी बात सामने आयी है, संभावना जताई जा रही है कि अन्य पंचायतों में भी यह हाल हो सकता है।

वेबसाइट पर मजदूरों की जगह लगी नाबालिग बच्चों की तस्वीर। स्रोत- मनरेगा वेबसाइट

मामला मेरे संज्ञान में नहीं था। पूरे मामले की जांच कराई जाएगी। कहां से यह तकनीकी गलती हुई इसकी भी जांच कर इसे सुधारा जाएगा। - रवि आनंद, डीसी, जामताड़ा

****

गर्भवती यूट्यूबर ने सांसद पर किया पलटवार, पूछा- किस-किस को करेंगे एयरलिफ्ट

नईदुनिया प्रतिनिधि, सीधी

यूट्यूबर गर्भवती लीला साहू ने भाजपा सांसद डा. राजेश मिश्रा के बयान पर पलटवार किया है। लीला ने वीडियो जारी कर कहा है कि सांसद किस-किस गर्भवती महिला को एयरलिफ्ट करेंगे। दरअसल, लीला व अन्य गर्भवती महिलाओं ने खड्डी खुर्द से गजरी गांव तक 10 किमी सड़क निर्माण की मांग का वीडियो इंटरनेट मीडिया डाला था। कहा था कि प्रसव के लिए अस्पताल तक जाने को सड़क बननी चाहिए। इसके बाद शुक्रवार को सांसद ने मीडिया से कहा था कि प्रसव की तारीख बता दें तो हम पहले ही उठवा लेंगे। हमारी सरकार सक्षम है और एयर एंबुलेंस की सुविधा भी है।

खड्डी खुर्द निवासी लीला साहू ने सांसद डा. राजेश मिश्रा के बयान पर कहा कि सांसद को मेरे लिए हेलीकाप्टर भेजने की जरूरत नहीं है। गांव में हमारे जैसी छह गर्भवती महिलाएं हैं। साथ ही अन्य मरीज भी हैं। सांसद किसे-किसे हेलीकाप्टर से उठाकर अस्पताल भेज देंगे। आप हमें केवल सड़क दे दीजिए। सड़क बन जाएगी तो सरकारी एंबुलेंस न सही प्राइवेट वाहन से तो अस्पताल पहुंच सकेंगे। दूसरे वीडियो में लीला ने कहा कि सड़क में मुरम डाल दी जाए, ताकि सड़क चलने लायक हो जाए। मेरे गर्भ का नौवां महीना चल रहा है। किसी भी समय अस्पताल जाना पड़ सकता है। ऐसे में अस्पताल कैसे पहुंचेंगे।

वहीं, इस मामले में पूर्व मंत्री व कांग्रेस नेता कमलेश्वर पटेल ने चुटकी लेते हुए कहा कि लीला साहू सड़क की मांग ही तो कर रही हैं। सिंगरौली में आप गर्भवती महिला को 108 एंबुलेंस की व्यवस्था नहीं कर पा रहे हैं तो भला एयरलिफ्ट की कैसे व्यवस्था करेंगे।

लीला साहू (बाएं से पहले) एक अन्य गर्भवती महिला के साथ। वीडियो ग्रैब

कूटनीति दूसरे पक्ष से अपनी मर्जी का काम करवा लेने की कला है। -डेनियल वेरे

राधिका यादव के दुखद अंत की कहानी पितृसत्तात्मक समाज की कड़वी सच्चाई से रुबरु कराती है। आज जरूरत इस बात की है कि बेटियों को सिर्फ बड़ा न किया जाए, बल्कि जब वे ऊंचे उठें, सामाजिक बेड़ियों को मात दें, तो उनके साथ खड़ा भी हुआ जाए।

सपनों की सजा

गुरुग्राम में पच्चीस वर्षीय टेनिस खिलाड़ी राधिका यादव की खुद उसके पिता के हाथों हत्या देश की सामूहिक चेतना को झकझोरने वाली तो है ही, यह घटना हमारे समाज की उस कुरूप मानसिकता को भी उजागर करती है, जो आज भी महिलाओं की स्वतंत्रता और उनकी महत्वाकांक्षाओं को दबाने की हरसंभव कोशिश करती है। एक मध्यमवर्गीय परिवार में जन्मी राधिका ने बचपन से ही टेनिस कोर्ट पर अपनी प्रतिभा का परचम लहराया। उनके पिता, दीपक यादव ने न केवल उसकी प्रतिभा को पहचाना, बल्कि खबरों के मुताबिक, उसके सपनों को साकार करने के लिए टेनिस अकादमी की स्थापना के लिए भारी खर्च भी किया। लेकिन फिर कुछ ऐसा हुआ कि जिस पिता को सुरक्षा का पर्याय माना जाता है, उसी ने गोलियों से उसकी जिंदगी को खत्म कर दिया। पुलिस की जांच और राधिका की दोस्त के बयानों से पता चलता है कि राधिका का घर ऐसा था, जहां उसकी स्वतंत्रता को लगातार दबाया जाता था। कपड़ों से लेकर लड़कों से बात करने तक और अपनी मर्जी से जीवन जीने के लिए उसे ताने सुनने पड़ते थे। दरअसल, यह घटना हमें पितृसत्तात्मक समाज की उस कड़वी सच्चाई से रूबरू कराती है, जहां बेटियों को पढ़ाने, कैरिअर बनाने और सपने देखने की इजाजत तो दी जाती है, लेकिन जैसे ही वे अपने पंख फैलाकर उड़ान भरने की कोशिश करती हैं, उन्हें सामाजिक नियमों और परिवार के सम्मान के नाम पर दबा दिया जाता है। अक्सर लड़कियां हार भी मान लेती हैं, लेकिन वह कमजोरी की वजह से नहीं, बल्कि शांति बनाए रखने के लिए होता है। कहा जा रहा है राधिका के पिता को लोगों के ताने सुनने पड़ रहे थे कि वह बेटी की कमाई पर जी रहा है। ऐसे में, सवाल उठता है कि क्या एक बेटी की सफलता पिता के लिए शर्मिंदगी का कारण बननी चाहिए? राधिका जैसी बेटियों का हश्र इस सच्चाई को उजागर करता है कि बेटियां आज भी अपने आसपास के लोगों की सोच से किस कदर बंधी हुई हैं। राधिका की कहानी महज एक हत्या की कहानी नहीं है; यह उस सामाजिक मानसिकता की कहानी है, जो आज भी बेटियों को उनके सपनों के लिए सजा देती है। जब तक समाज बेटियों को बोझ के बजाय संभावनाओं के केंद्र के रूप में नहीं देखेगा, तब तक भारत उस अतीत की जंजीरों में जकड़ा रहेगा, जिससे वह आगे निकलने का दावा करता है। जरूरत इस बात की है कि बेटियों को सिर्फ बड़ा न किया जाए, बल्कि जब वे ऊंचे उठें, सामाजिक बेड़ियों को मात दें, तो उनके साथ खड़ा भी हुआ जाए।

इस्राइल की आक्रामकता अकारण नहीं

इस्राइल की आक्रामकता के आलोचकों को यह समझना चाहिए कि आज अगर लेबनान हिजबुल्ला को निरस्त्र करने में लगा है, या गाजा में लड़ाई रोकने के लिए सहमति बनती दिख रही है, तो इसकी मुख्य वजह इस्राइल की सैन्य नीति ही है, जिसने दशकों से बंद पड़े कूटनीति के दरवाजे खोल दिए हैं।

सात अक्तूबर, 2023 की घटना के बाद इस्राइल की नीति को लेकर यह गलत धारणा है कि यह देश कूटनीति की कीमत पर सैन्य कार्रवाई को पसंद करता है। सच तो यह है कि इस्राइल की युद्धक्षेत्र में निर्णायक विजयों ने ही ऐसे कूटनीतिक अवसर पैदा किए हैं, जो दशकों से उसकी पहुंच से परे थे-और अगर इस्राइल नहीं जीतता, तो वही स्थिति बनी रहती। तुर्किये में पदस्थ अमेरिकी राजदूत और सीरिया के लिए विशेष दूत टॉम बराक ने कहा कि वह लेबनान के राष्ट्रपति जोसेफ औन द्वारा हिजबुल्ला को निरस्त्र करने के लिए छह साल के आर्थिक संकट के बाद महत्वपूर्ण वित्तीय सहायता के बदले में अमेरिकी प्रस्ताव पर मिली प्रतिक्रिया से 'अविश्वसनीय रूप से संतुष्ट' थे।

ब्रेट स्टीफंस

द न्यूयॉर्क टाइम्स

लेबनान के इतिहास में औन की यह पहली सरकार है, जो इस्राइली सीमा के नजदीक हिजबुल्ला के गढ़ों को कमजोर करने में लगी हुई है, लेकिन शर्त यह है कि इस्राइल दक्षिणी लेबनान में अपने कब्जे वाली पांच सैन्य चौकियों से हट जाए। हिजबुल्ला ऐसा संगठन नहीं है, जो शांति से चला जाए, यदि उसके पास अन्य विकल्प हों, तब भी नहीं। लेकिन ऐसा इसलिए संभव लग रहा है, क्योंकि बीते साल इस्राइल ने हिजबुल्ला पर प्रभावी हमले कर लगभग उसकी कमर तोड़ दी थी।

इसलिए अब लेबनानी राज्य के लिए फिर से संप्रभुता प्राप्त करना, अर्थात अपनी सीमाओं के भीतर बल प्रयोग पर एकाधिकार प्राप्त करना संभव हो गया है। और यह केवल इस्राइल की जीत के कारण ही संभव है कि विस्तारित अब्राहम समझौते के हिस्से के रूप में यरुशलम और बेरूत के बीच शांति समझौते की वास्तविक संभावना है।

सीरिया में भी ऐसी ही एक आशाजनक कहानी गढ़ी जा रही है, जहां बीते हफ्ते ट्रंप प्रशासन ने राष्ट्रपति अहमद अल-शरा की सरकार पर लगे प्रतिबंध हटा लिए। अल-शरा के प्रति गर्मजोशी दिखाने में अमेरिका इस्राइल से एक कदम आगे रहा है, जो कभी अल-कायदा की एक शाखा का नेतृत्व करते थे और जिन्हें कुछ इस्राइली नेता आज भी एक गुप्त जिहादी मानते हैं। अब ऐसी खबरें हैं कि यरुशलम और दमिश्क के बीच एक वास्तविक शांति समझौते के लिए बातचीत चल रही है। देखना होगा कि यह बातचीत कहां तक जाती है। लेकिन यह असंभव होता, अगर अल-शरा के विद्रोहियों के सत्ता में आने से पहले इस्राइल ने हिजबुल्ला को बर्बाद न किया होता और बशर अल-असद के शासन को उसके सबसे प्रभावी सैन्य हथियारों में से एक से वंचित न किया होता। यदि बीते साल इस्राइल ने सीरिया के कई हथियार भंडारों को नष्ट न किया होता, तो आज यरुशलम और दमिश्क बातचीत के लिए तैयार नहीं होते, और इस्राइल को अपने उत्तर में हमेशा खतरे की आशंका रहती।

अब बात गाजा की। सात जुलाई को व्हाइट हाउस में राष्ट्रपति ट्रंप के साथ प्रधानमंत्री बेंजामिन नेतन्याहू के रात्रिभोज के बाद इस्राइली अधिकारियों ने संकेत दिए हैं कि वे एक समझौते के करीब हैं, जिसके तहत हमास द्वारा और बंधकों की रिहाई के बदले में लड़ाई रोक दी जाएगी। ट्रंप का अनुमान है कि यह समझौता जल्द हो सकता है। ऐसा इसलिए नहीं हो रहा है कि नेतन्याहू सरकार और हमास नेतृत्व को अचानक यह एहसास हो गया है कि गाजा में बहुत तबाही हो चुकी है और लोग पीड़ित हैं। ऐसा तो हो चुका, लेकिन इसका अंत देखना सभी के हित में है। लेकिन मानवीय अपीलें कितनी भी ईमानदार हों, या नैतिक धमकियां कितनी भी प्रभावी हों, लड़ाई को रोकने में लगभग कोई योगदान नहीं दे पाई हैं। युद्ध ग्रेटा थनबर्ग के नाव पर सवार होने भर से समाप्त नहीं हो जाते।

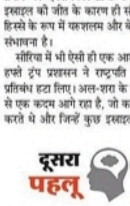

असल में ताकत का गणित ही मायने रखता है। हमास की ओर से उसका बढ़ता कूटनीतिक लचीलापन लगभग पूरी तरह से उसकी पूर्ण हार के निकट होने का परिणाम है। बीबीसी के अनुसार, हमास के एक पदाधिकारी ने निजी तौर पर बताया कि उसका 95 फीसदी नेतृत्व खत्म हो चुका है और हमास ने 80 प्रतिशत क्षेत्र पर अपना नियंत्रण खो दिया है। कई गाजावासी हमास के खिलाफ हो गए हैं, उसके सुरक्षा मुख्यालयों को लूट रहे हैं तथा भोजन व सुरक्षा के लिए स्थानीय कबीलों की ओर लौट रहे हैं। ये वे परिस्थितियां हैं, जिनके तहत हमास के बचे हुए सदस्य अंततः हथियार डालने और निर्वासन में जाने के लिए सहमत हो सकते हैं, जिससे अंततः लड़ाई के स्थायी अंत, नए शासन और अत्यंत आवश्यक पुनर्निर्माण की संभावना पैदा होगी। इस्राइल की तरफ से दिख रहे कूटनीतिक लचीलेपन के तीन कारण हैं। पहला, 21 महीने की लड़ाई के कारण इस्राइली जनता की थकान समझी जा सकती है। दूसरा, समझौते के लिए राष्ट्रपति ट्रंप का दबाव और नेतन्याहू द्वारा उन्हें खुश करने का प्रयास करना है। लेकिन इनमें से कोई भी कारक पर्याप्त नहीं होता, यदि इस्राइल ने ईरान पर सैन्य सफलता हासिल न की होती। इस्राइल के दृष्टिकोण से ही उसके अभियान में अमेरिका की भागीदारी संभव हुई। एक ही झटके में इस्राइल ने अपने सबसे दुर्जेय प्रतिद्वंद्वी (और हमास के प्रमुख संरक्षक) को बेआबरू कर दिया। उसने न केवल मुल्लाओं से सीधे मुकाबला करने में अपनी क्षमता का, बल्कि उनके प्रतिशोधों से सुरक्षित बचने के साहस का भी प्रदर्शन किया। इसने सऊदी अरब के सामने अपनी क्षमताओं का प्रदर्शन किया, जो अब अब्राहम समझौते में शामिल होने के लिए ज्यादा इच्छुक हो सकता है-शांति की सौम्य इच्छा से नहीं, बल्कि यहूदी राज्य के साथ सैन्य, आर्थिक और तकनीकी संबंधों को मजबूत करने की दृढ़ इच्छा से। इसने कम से कम यह संभावना तो पैदा की कि ईरान अपनी परमाणु महत्वाकांक्षाओं को फिर से नष्ट होते देखने के डर से उसे त्यागने का फैसला कर सकता है। और इस जीत ने नेतन्याहू को अपने अति-दक्षिणपंथी गठबंधन सहयोगियों पर बढ़त दिला दी, जिससे उन्हें एक ऐसे समझौते पर हस्ताक्षर करने का मौका मिला, जिससे शायद उनकी सरकार नहीं गिरेगी।

इस्राइली नीति के आलोचकों का तर्क है कि उसकी सैन्य जीत की कीमत विश्व मंच पर उसके अलग-थलग पड़ने या जोहरान ममदानी और टकर कार्लसन जैसे लोगों द्वारा उसके प्रति की गई अवमानना में निहित है। इसमें संदेह नहीं है कि इस्राइल के प्रति नफरत ने यहूदी-विरोध को बढ़ाने में काफी योगदान दिया है, लेकिन यह भी उतना ही सच है कि इस्राइल के प्रति नफरत की जड़ में यहूदी-विरोध ही है। फिर भी, इस्राइल का अस्तित्व अपने आलोचकों को संतुष्ट करने के लिए नहीं है। उसका अस्तित्व ऐसी दुनिया में यहूदी जीवन की रक्षा करने और यहूदी गरिमा को बनाए रखने लिए है, जो इन दोनों को नष्ट करने पर आमादा है। यदि कूटनीति के सफल होने की अब कोई संभावना है, तो यह इसलिए है, क्योंकि भू-राजनीति में जीवन की तरह विजेता बनना लाभदायक होता है।

©The New York Times 2025

जीवन धारा

रॉबर्ट ग्रीन

आपकी निगाहें उन प्रवृत्तियों पर होनी चाहिए, जो घटनाओं को नियंत्रित करती हैं। अपने दीर्घकालीन लक्ष्यों को कभी भी नजरों से ओझल नहीं होने दें। दृष्टिकोण ऊंचा होगा, तो लक्ष्य तक पहुंचने का धीरज होगा।

शिखर से चीजें स्पष्ट दिखती हैं

अपने जीवन में वर्तमान में आप जो कुछ देख और सुन सकते हैं, उससे आप सबसे ज्यादा प्रभावित होते हैं- ताजा समाचार और फैशन, आसपास के लोगों के मत और गतिविधियां, ये सबसे ज्यादा नाटकीय प्रतीत होती हैं। यही वह चीज है, जिसकी वजह से आप ललचाने वाली योजनाओं के शिकार हो जाते हैं। ये सब आपको वर्तमान परिस्थितियों के प्रति अतिशय प्रतिक्रिया के लिए बाध्य करती है- जैसे ही घटनाएं दिशा लेती हैं, आप या तो बहुत आनंद में डूब जाते हैं या आतंकित हो जाते हैं। ऐसे लोगों से उलझने से बचिए, जो अपने कर्म के परिणाम को नहीं देख सकते, जो निरंतर प्रतिक्रियात्मक रुख अपनाए रहते हैं। वे आपको इस ऊर्जा की छूत लगा देंगे। आपकी निगाहें व्यापकतर प्रवृत्तियों पर होनी चाहिए, जो घटनाओं को नियंत्रित करती हैं, आपकी निगाहें उस चीज पर होनी चाहिए, जो तुरंत दिखाई नहीं देती। अपने दीर्घकालीन लक्ष्यों को कभी भी नजरों से ओझल नहीं होने दें। अगर आपका दृष्टिकोण ऊंचा होगा, तो आप किसी भी लक्ष्य तक पहुंचने का धीरज होगा, स्पष्टता होगी। वर्तमान में हमारे पास दृष्टिकोण का अभाव है। जो चीज हमें वर्तमान में दिखाई नहीं दे रही थी, वह सिंहावलोकन करने पर बाद में दिखाई देने लगती है। समय सबसे बड़ा शिक्षक, वास्तविकता का सबसे बड़ा उद्घाटक है। इसकी तुलना हम इस दृश्य से कर सकते हैं: एक पर्वत की तलहटी में, घने जंगल में हम अपनी दिशा या अपने आसपास की स्थिति का आकलन नहीं कर पाते। हम केवल वही देख पाते हैं, जो हमारी आंखों के सामने होता है। अगर हम पर्वत पर चढ़ने लगते हैं, तो हमें अपने आसपास की चीजें और भूदृश्य के दूसरे हिस्से की स्थिति बेहतर दिखाई देने लगती है। हम जितना ही ऊपर चढ़ते जाते हैं, उतना ही हमें समझ आने लगता है कि नीचे के बारे में हम जो सोचते थे, वह एकदम सही नहीं था, बल्कि वह किंचित विकृत दृष्टिकोण पर आधारित था। पर्वत के शिखर से हमें विहंगम दृश्य और इलाके का विन्यास स्पष्ट दिखाई देने लगता है। वर्तमान क्षण में बंद हम मनुष्यों के लिए यह कुछ ऐसा है, जैसे हम पहाड़ी की तलहटी में रह रहे हों। समय के गुजरने के बाद ज्यादातर चीजें पीछे मुड़कर देखने पर स्पष्ट होती हैं। लेकिन हम इन्सानों के पास समय के प्रभाव को गढ़ने का एक तरीका है, ऐसा तरीका जो हमें वर्तमान क्षण का विस्तृत दृश्य दिखाता है। हम इसे दूरदर्शी दृष्टिकोण की संज्ञा दे सकते हैं। यह सबसे जरूरी है कि जब हम किसी समस्या, टकराव, या किसी उत्तेजक अवसर का सामना कर रहे हों, तो हमें तत्कालीन भावोत्तेजना से खुद को मुक्त कर लेना चाहिए। हम अपनी उत्तेजना या अपने भय को शांत होने दें। हम कुछ दूरी बनाएं। इसके बाद हम अपने दृष्टिकोण को गहरा और विस्तृत करना शुरू करें। अगर मुमकिन हो, तो ऐसे लोगों के साथ प्रगाढ़ रिश्ता बनाने से बचें, जिनकी समय-सीमा संकुचित है, जो लगातार प्रतिक्रियात्मक बने रहते हैं। इसके बजाय उन लोगों से जुड़ने की कोशिश करें, जिनके समय का बोध व्यापक है।

- द लॉज ऑफ ह्यूमन नेचर के अनूदित अंश

दूरदर्शी बनें

सूत्र

जीवन की घटनाओं से अधिक प्रभावित होकर स्वयं को अपने लक्ष्य से दूर नहीं करें, बल्कि दूरदर्शी दृष्टिकोण को अपने जीवन का हिस्सा बनाएं। अपने आसपास में वैसे लोगों के साथ रहें, जो सकारात्मकता के भाव रखते हैं, फिर सबकुछ बेहतर होगा। अच्छे लोगों के साथी बनें और अपने आसपास का वातावरण को शुद्ध रखें।

दूसरा पहलू

भानुभक्त आचार्य ने सबसे पहले रामायण का नेपाली भाषा में अनुवाद किया। इसके पीछे एक दिलचस्प कहानी है।

नेपाली भाषा के आदिकवि और उनकी रामायण

रामायण की कथा, चरित्र और आदर्श आज भी उतने ही प्रासंगिक हैं, जितने हजारों साल पहले थे। यही कारण है कि पूरे विश्व में 50 से अधिक भाषाओं में दुनिया के सबसे प्राचीनतम महाकाव्य *रामायण* का अनुवाद हो चुका है। ऐसे में हमारा पड़ोसी देश नेपाल कैसे पीछे रह सकता था, जिसका *रामायण* से अटूट संबंध है। भारत में भगवान राम की अयोध्या है, तो नेपाल में मां जानकी का जनकपुर है। मां जानकी की धरती पर 13 जुलाई, 1814 में नेपाल के तनहु जिले के चुंदी रम्घा गांव में, धनंजय आचार्य और धर्मावती आचार्य के घर भानुभक्त आचार्य का जन्म हुआ। उन्होंने प्रारंभिक शिक्षा अपने दादा से संस्कृत में प्राप्त की और उच्च शिक्षा वाराणसी में प्राप्त की। भानुभक्त आचार्य नेपाली लेखक, कवि और अनुवादक थे। उन्होंने ही सबसे पहले रामानंद कृत *अध्यात्म रामायण* का सरल और सुंदर ढंग से नेपाली भाषा में पद्य रूप में अनुवाद किया। उनके *रामायण* का अनुवाद करने के पीछे एक दिलचस्प कहानी है।

एन अर्जुन

भानुभक्त कृत रामायण वस्तुतः नेपाल का 'रामचरित मानस' है। यह पद्य शैली में है, जो बरबस ही सबका मन मोह लेती है।

कहते हैं कि भानुभक्त आचार्य का परिवार काफी धनाढ्य था। इसलिए उन्होंने कभी गरीबी का अनुभव नहीं किया। एक दिन वह गांव में घूम रहे थे कि एक घास काटने वाला मिला। जब उन्होंने उससे घास काटने की वजह पूछी, तो उसने बताया कि इसके पैसों से वह लोगों के लिए एक कुआं खुदवाएगा, ताकि लोगों और राहगीरों को पीने के लिए पानी मिल सके। यहीं से भानुभक्त के मन में लोकसेवा की भावना जागी और उन्होंने लोकसेवा के लिए *रामायण* का नेपाली भाषा में अनुवाद शुरू किया। भानुभक्त आचार्य ने भगवान राम की कथा को जनभाषा में प्रस्तुत किया, जिससे आम नेपाली भाषी लोगों को रामकथा को समझने और पढ़ने में सरलता हुई। इसे भानुभक्त आचार्य की *रामायण* के नाम से भी पुकारा जाता है। यह कार्य 1887 ई. में पूर्ण हुआ। इस अद्वितीय कृति ने खस-पहाड़ी भाषा (जो बाद में नेपाली बनी) को समृद्ध किया। इस कार्य ने उन्हें नेपाल के 'आदिकवि' की उपाधि दिलाई। भानुभक्त कृत *रामायण* वस्तुतः नेपाल का *रामचरित मानस* है। इसका पाठ पद्य रूप में किया जाता है, जो बरबस ही सबका मन मोह लेता है। नेपाली भाषा के इस आदिकवि ने 1868 में इस संसार से विदा ली। उनके जीवन में उनकी रचनाएं अप्रकाशित रहीं, जिसकी वजह से तब उन्हें अपनी कृतियों का यश नहीं मिला। लेकिन 1887 में कवि मोतीराम भट्ट ने आचार्य की कृतियों का पता लगाकर वाराणसी से प्रकाशित करवाया, तब जाकर उनके अद्भुत कार्य का पता चला। आचार्य ने जो उपकार नेपाली भाषा-भाषियों पर किया है, वह अकल्पनीय, अविस्मरणीय और वंदनीय है।

आंकड़े

घरों में एसी

दुनिया भर में 2.4 अरब से ज्यादा एसी उपयोग में हैं। लेकिन स्टेटिस्टा सर्वेक्षण के अनुसार जापान के घरों में सबसे ज्यादा एयर कंडीशनर हैं।

जापान	84%
चीन	73%
ऑस्ट्रेलिया	69%
अमेरिका	64%
यूनाइटेड किंगडम	18%

आंकड़े एसी इस्तेमाल करने वाले देशों के प्रतिशत में। | स्रोत : Statista

अनंत की गुरु सेवा को लोग समय की बर्बादी कहते थे। एक बार गांव में आग लग गई। अंत में उसने गुरु के ज्ञान से गांववालों को एकजुट किया, और आग बुझाई।

गुरु और शिष्य का प्रेम अमर है

अंतर्यात्रा

संकलित

हिमालय की तलहटी में गुरु सत्यनारायण रहते थे। वह शांत, ज्ञानी और करुणामय थे, जो प्रकृति के साथ एकाकार होकर जीवन का सत्य सिखाते। अनंत, एक उत्साही युवा, उनके पास ज्ञान की खोज में आया। गुरु ने उसे ध्यान, शास्त्र और सेवा का पाठ पढ़ाया। अनंत की जिज्ञासा देखकर गुरु कहते, 'सच्चा ज्ञान हृदय की शांति में बसता है।' अनंत गुरु की सेवा करता, इसे देखकर लोग कहते तुम अपना समय बर्बाद कर रहे हो। अनंत उन लोगों से कहता, 'मेरे गुरु का प्रेम और ज्ञान ही मेरी धरोहर है।'

एक बार गांव में आग लग गई। लोग घबराए, पर गुरु ने अनंत से कहा, 'शिष्य, संकट में ज्ञान और प्रेम ही बल देते हैं।' गुरु ने गुप्त रूप से उसकी मदद की। गुरु ने उसे विश्वास दिलाया, 'सत्य की राह पर चलने वाले को कभी डर नहीं लगता।' अनंत ने गुरु के विश्वास से बल पाया और गांव में एकता का संदेश फैलाया। अनंत ने गांव वालों को एकजुट किया, और आग बुझाई। एक दिन गुरु ने अनंत को बुलाया। उन्होंने कहा, 'मेरे तीन संदेश हैं, ज्ञान बांटो, प्रेम फैलाओ, और प्रकृति की रक्षा करो।' अनंत ने संकल्प लिया। गुरु के निधन के बाद, अनंत ने हिमालय में एक आश्रम बनाया। वहां वह गुरु के उपदेशों को जीवंत रखता। उसने गुरु के ज्ञान को और फैलाया। अंत में लोगों को समझ आया कि गुरु और शिष्य का प्रेम अमर है।

अमर उजाला

पुराने पन्नों से — 14 जुलाई, 1951

पाकिस्तानी नेताओं को सजा भुगतनी होगी

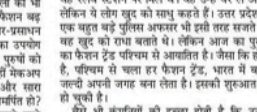

प्रधानमंत्री जवाहरलाल नेहरू ने पूर्वी बंगाल में हिंदुओं पर किए जा रहे अत्याचारों पर लिखा कि पाकिस्तानी नेताओं को अपने कारनामों की सजा भुगतने के लिए जिंदा रहना होगा। पाकिस्तान को ऐसा करने के लिए अमेरिका भड़का रहा है।

बाजार तो चाहता है कि पुरुष भी सजें

कंपनियां चाहती हैं कि उनके उत्पाद महिलाओं के साथ पुरुष भी इस्तेमाल करें। पुरुषों को दिक्कत नहीं, तो कंपनियां भारी मुनाफा क्यों छोड़ेंगी।

क्षमा शर्मा

फैशन

फैशन की दुनिया में हर रोज नए-नए ट्रेंड्स चलते रहते हैं। यदि इन्हें बड़ी सेलिब्रिटीज के द्वारा चलाया जाए, तो ये बहुत जल्दी गति पकड़ते हैं। जाहिर है कि सेलिब्रिटीज इन्हें किसी न किसी कंपनी के विज्ञापन के तौर पर चलाते हैं। इससे उन्हें भारी कमाई होती है। लेकिन लोग इनसे प्रभावित होकर उस ब्रांड के उत्पादों को हाथों-हाथ लेते हैं।

इन दिनों पुरुषों की दुनिया का नया ट्रेंड है, सजना-संवरना। अपने नाखूनों पर तरह-तरह की नेल पॉलिश लगाना। इसके पक्ष में कुछ पुरुष कह रहे हैं कि फैशन या सजना-संवरना, लैंगिक भेदभाव से मुक्त होना चाहिए। पुरुष क्यों नहीं नेल पॉलिश लगा सकते? वे क्यों नहीं अपने नाखूनों को सुंदर रख सकते? किसने कहा कि नेल पॉलिश पर सिर्फ स्त्रियों का ही अधिकार है?

कहा जा रहा है कि आदमियों द्वारा नेल पॉलिश लगाना कोई नई बात नहीं है। अंग्रेजी गायक डेविड बोवी जब मंच पर गाते थे, तो हमेशा उनके नाखूनों में नेल पॉलिश लगी रहती थी। आजकल सिर्फ नेल पॉलिश ही नहीं लगवाई जा रही, बल्कि तरह-तरह के डिजाइन भी बनवाए जा रहे हैं। उंगलियों में भी तरह-तरह की अंगूठियां पहनी जा रही हैं।

पुरुषों के लिए साज-सज्जा का काम करने वाले विशेषज्ञ कह रहे हैं कि इसमें गलत क्या है! जो पुरुषों को अच्छा लगता है, वह वे कर सकते हैं। प्रतीक बब्बर से लेकर बहुत से लोग अपने रंगीन नाखूनों को दिखाकर खुश हो रहे हैं। पुरुषों का कहना है कि इस तरह से वे स्त्री नहीं हो जाते, पुरुष ही रहते हैं। हां, पुरुषों को भी सुंदर और आकर्षक दिखने का हक है। दुनिया के बहुत से मशहूर गायक और अभिनेता इसे अपना रहे हैं।

यह भी बताया जा रहा है कि नाखूनों पर तरह-तरह के रंगों की नेल पॉलिश आदमी की सामाजिक स्थिति भी बताती है। जैसे कि काला रंग ऊंची आर्थिक स्थिति का प्रतीक है, तो हरा रंग साधारण लोगों के लिए है। कमाल है न, रंगों ने भी अमीर-गरीब का भेद सीख लिया है!

सिर्फ नेल पॉलिश ही नहीं, पुरुषों में बालों को भी तरह-तरह से रंगवाने, सजाने, काढ़ने का फैशन बढ़ रहा है। उनके लिए तरह-तरह के शृंगार-प्रसाधन बाजार में आ रहे हैं। वे बड़ी मात्रा में इनका उपयोग भी कर रहे हैं। यह भी कहा जा रहा है कि पुरुषों को ब्यूटी मिथ्स को तोड़ना चाहिए। वे क्यों नहीं मेकअप कर सकते! सारा मेकअप का सामान और सारा प्रसाधन उद्योग आखिर स्त्रियों को ही क्यों समर्पित हो?

पुरुषों के फैशन ट्रेंड्स पर वर्षों से लिखने वाले पत्रकार कह रहे हैं कि मेकअप के प्रति जितना आकर्षण इन दिनों पुरुषों में देखा जा रहा है, वह पहले कभी नहीं देखा गया। वे अपनी त्वचा की देखभाल पहले से अधिक कर रहे हैं। इसके लिए तरह-तरह के प्रसाधनों का इस्तेमाल किया जा रहा है। हो सकता है कि आने वाले दिनों में वे लिपस्टिक का भी बड़े पैमाने पर इस्तेमाल करने लगें।

बताने वाले यह भी कह रहे हैं कि पुरुषों का इस तरह से सजना-संवरना कोई नया नहीं है। हजारों वर्षों से पुरुष ऐसा करते आए हैं। अपने यहां भी राजा-महाराजाओं की तस्वीरें देखें, तो वे खूब गहने पहने दिखते हैं। उनके माथे पर तिलक भी लगे होते हैं। भगवानों की मूर्तियां भी खूब गहने पहने रहती हैं। यानी कि गहनों पर भी स्त्रियों का एकाधिकार नहीं है।

पुरुषों के इस फैशन के बारे में सोचते हुए अपने यहां के सखी संप्रदाय की याद आती है। ये पुरुष स्त्री भाव से सजते हैं। वैसे ही सिंदूर लगाते हैं। चूड़ियां पहनते हैं। पांवों में आलता और महावर लगाते हैं। जब बहुत छोटी थी, तो एक सुबह जब उठी, तो एक महिला पर नजर पड़ी। वह इसी तरह सजी हुई थी। पता चला कि वह महिला नहीं, पुरुष हैं। पिता जी को वह रेलवे स्टेशन पर मिले थे। वह उन्हें घर ले आए। लेकिन ये लोग खुद को साधु कहते हैं। उत्तर प्रदेश में एक बहुत बड़े पुलिस अफसर भी इसी तरह सजते थे। वह खुद को राधा बताते थे। लेकिन आज का पुरुषों का फैशन ट्रेंड पश्चिम से आयातित है। जैसा कि होता है, पश्चिम से चला हर फैशन ट्रेंड, भारत में बहुत जल्दी अपनी जगह बना लेता है। इसकी शुरुआत भी हो चुकी है।

वैसे भी कंपनियों की इच्छा होती है कि उनके उत्पादों को किसी एक वर्ग तक ही सीमित न रखा जाए! यदि कोई उत्पाद स्त्री-पुरुषों के भेद से मुक्त है, तो उसका उपयोग बढ़ता है और इस बहाने कंपनियां भारी मुनाफा कमाती हैं। वे उत्पादों को सौंदर्य और दूसरे से हमेशा अलग दिखने की चाहत से जोड़ देती हैं। और इस तरह घर-घर पहुंच जाती हैं।

edit@amarujala.com